SAPTHAGIRI (HINDI)
ILLUSTRATED MONTHLY
Volume:52, Issue: 9
February-2022, Price Rs.5/-.
No. of pages-56.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

फरवरी-2022

रु.5/-

श्रीनिवासमंगापुरम्

श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव

2022 फरवरी 19 से 28 तक

19-02-2022 शनिवार
दिन - .....
रात - सेनाधिपति उत्सव, अंकुरार्पण

20-02-2022 रविवार
दिन - तिरुच्चि उत्सव, ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

21-02-2022 सोमवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

22-02-2022 मंगलवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

23-02-2022 बुधवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

24-02-2022 गुरुवार
दिन - पालकी में आरूढ़ मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

25-02-2022 शुक्रवार
दिन - हनुमन्तवाहन
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

26-02-2022 शनिवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

27-02-2022 रविवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

28-02-2022 सोमवार
दिन - पालकी उत्सव, तिरुच्चि उत्सव, तीर्थवारि अवबृथोत्सव, चक्रस्नान
रात - तिरुच्चि उत्सव, ध्वजावरोहण

दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्।
सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति॥
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते।
गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते॥
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः॥

(- श्रीमद्भगवद्गीता १-२८, २९, ३०)

अर्जुन ने कहा - हे कृष्ण! युद्ध क्षेत्र में डटे हुए युद्ध के अभिलाषी मेरे स्वजनों को देख कर मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं और मुख सूखा जा रहा है तथा मेरे शरीर कंपित एवं रोमांच हो रहे हैं।

हाथ से गाण्डीव धनुष गिर रहा है और त्वचा भी बहुत जल रही है तथा मेरा मन भ्रमित-सा हो रहा है, इसलिये मैं खडा रहने को भी समर्थ नहीं हूँ।

गीतार्थ श्रवणासक्तो महापापायुतोपि वा।
वैकुण्ठं समवाप्नोति विष्णुना सह मोदते॥

(- गीता मकरंद, गीता माहात्म्य)

जो गीतार्थ के श्रवण के प्रति आसक्ति रखता है वह चाहे जितना भी महापापी क्यों न हो, वैकुंठ जाकर वहाँ विष्णु के साथ रहकर आनन्द पाता है।

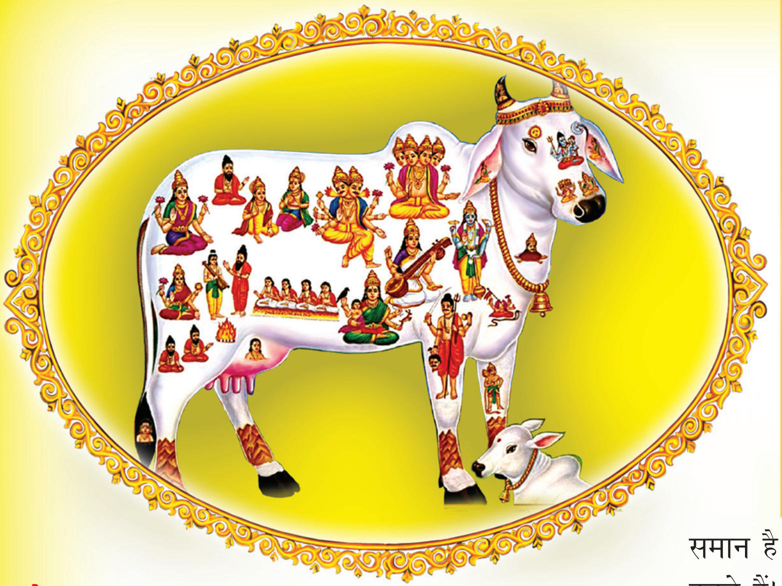

पंचगव्य

१. गोमूत्र - गोमूत्र दिव्यौषध है। इससे अनेक रोग दूर होते हैं। गोमूत्र से आँखें साफ करने से नेत्र बीमारियाँ दूर होती हैं। इससे बढकर कफ, वायु, शूल, गल्म, प्लीह, उदर रोग भी गोमूत्र सेवन से दूर हो जाते हैं।

२. गोमय - गोमय का मतलब गाय का गोबर है। इसे पानी में गोल कर, यज्ञकर्मों में, आश्रमों में, गृहों में शुद्धि के लिए उपयोग करते हैं। विभूति को भी गाय के गोबर से ही तैयार करते हैं। गोमय से शुद्धि किए हुए प्रदेशों में जूते रहित चलने से गोमय से प्राप्त होनेवाले तेजस्सु पैरों से देह भर फैलता है। जिससे मनुष्य स्वस्थ्य रहता है। साथ ही मनुष्य को शक्तिवान बनाता है। गोमय से अगरबत्तियाँ, क्रिमि संहारक दवाइयाँ, खाद आदि तैयार करते हैं।

३. गोक्षीर - गोक्षीर का मतलब गाय का दूध है। गोक्षीर अति पवित्र होता है। स्वादिष्ट भी होता है। प्रत्येक देवतामूर्ति का अभिषेक गोक्षीर से ही किया जाता है। प्रत्येक शिशु को माँ के दूध के बाद गोक्षीर ही मुख्य आहार है। गाय का दूध अमृत समान है। गाय का दूध वात, पित्त, कफ नाम त्रिदोषों को दूर करते हैं। हृदय संबंधी रोगों को भी दूर करते हैं। गाय का दूध शरीर को कांतिवान, पुष्टि, शुभ, पवित्रता, आयु, केशाभिवृद्धि और यौवन को प्रदान करते हैं।

४. गोदधि - गोदधि का मतलब गाय के दूध से बना दही है। गाय के दूध से बना दही अत्यंत स्वादिष्ट होता है। ठंडक पहुंचाता है। देवतामूर्तियों के अभिषेक में गोदधि का उपयोग किया जाता है। दही को खाने से भूख बढती है। उष्ण गुण एवं अग्नि बल प्रदान करता है। वात रोग को दूर करता है। याद्दास्त को बढाता है। साथ ही मनुष्य को बल प्रदान करता है।

५. गोघृत - गोघृत का मतलब गाय के दूध से बनाया गया घी है। इसी को गाय का घी भी कहा जाता है। गोघृत वात, पित्त दोषों को ही नहीं जहर, शोष, बुखार आदि रोगों को भी दूर करता है। शिरो रोगों को, बेहोश, कर्ण रोगों को, नेत्र रोगों को भी दूर करता है। गाय के घी से दीप जलाना अति श्रेष्ठ है। इस की कांति नेत्रों के लिए श्रेष्ठ है।

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति॥

वर्ष-५२ फरवरी-२०२२ अंक-०९

विषयसूची

बसंत पंचमी - त्योहार	डॉ.गाजुला शेक षा वली	07
रथसप्तमी	डॉ.एच.एन.गौरीराव	11
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	15
मंदोदरी	डॉ.के.एम.भवानी	17
मंगलाशासन आल्वार-पाशुरम्	श्री के.रामनाथन	20
महर्षि विश्वामित्र	डॉ.जी.सुजाता	22
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	26
धर्म के सही मार्गदर्शन से युवाओं का अद्भुत विकास	श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालीया	31
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	33
जलाधिदेव श्री वेंकटेश्वर	आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी	34
तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर (तिरुपति बालाजी)	प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव प्रो.गोपाल शर्मा	36
श्रीमद्भगवद्गीता	श्री बी.राजीव रत्न	38
शांतिनिलयवासिनी देवी माँ	श्री आर.संघनिधि	39
हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश	डॉ.एम.आर.राजेश्वरी	42
श्रीवैष्णव का 108 दिव्य देश	श्रीमती विजया कमलकिशोर तापड़िया	44
आयुर्वेद में बंगाल चना	डॉ.सुमा जोषि	47
आइये, संस्कृत सीखेंगे...!!	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	49
चित्रकथा - श्री कल्याणवेंकटेश्वर स्वामीजी	डॉ.एम.रजनी	50
नीतिकथा - स्थाई सत्य	श्रीमती के.प्रेमा रामनाथन	52
क्विज	एन.प्रत्यूषा	53

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri.helpdesk@tirumala.org

गौरव संपादक
डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री पी.रामराजु
विशेष अधिकारी,
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

जीवन चंदा ..	रु.500-00
वार्षिक चंदा ..	रु.60-00
एक प्रति ..	रु.05-00
विदेशी वार्षिक चंदा ..	रु.850-00

मुखचित्र - सूर्यप्रभावाहन पर श्री मलयप्पस्वामीजी, तिरुमल।
चौथा कवर पृष्ठ - उभयदेवेरियों सहित श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी, श्रीनिवासमंगापुरम्।

अन्य विवरण के लिए:
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

सूचना

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।

- प्रधान संपादक

संपादकीय

दिवाकर नमस्तुभ्यं! प्रभाकर नमोस्तुते!!

उदये ब्रह्मरूपश्च। मद्याह्नेतु महेश्वरः।
अस्तकाले स्वयं विष्णुः। त्रिमूर्तिश्च दिवाकरः।।

साक्षात् प्रत्यक्ष भगवान सूर्य और चंद्र ही माने जाते हैं। ज्योतिष शास्त्र में इन्हें ग्रह मनाता जाता है। भगवान सूर्य की पूजा वैदिक काल से हो रही है। सनातन परंपरा में रविवार का दिन भगवान सूर्य को समर्पित हैं। सूर्य को सर्वबाधा विनाशक देव भी कहा जाता हैं। आयुर्वेद में कई व्याधियों-बीमारियों का इलाज सूर्य देव की किरणों द्वारा बताया गया है। सुबह-सुबह उदित हो रहे सूर्य को देखने से नेत्रज्योति बढ़ती है। और इसके अलावा प्रातःकाल सूर्य देव को प्रणाम करने के साथ ही दिन की शुरुआत की जाए, तो यह सकारात्मकता और ऊर्जा पाने का सबसे अच्छा उपाय है। योग में भी सूर्य नमस्कार को विशेष स्थान दिया है। इसलिए सूर्य को 'आरोग्य प्रदाता' कहते हैं।

माघ मास शुक्ल पक्ष सप्तमी को 'रथसप्तमी' के तौर पर मनाया जाता है। इस दिन सूर्य का जन्म हुआ था इसलिए इस दिन सूर्याराधन, सूर्य पूजा की जाती है। 'रथसप्तमी' को 'सूर्य सप्तमी', 'अचला सप्तमी' और 'आरोग्य सप्तमी' के नाम से भी जाना जाता है। हिन्दू धर्म में रथसप्तमी का विशेष स्थान है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार उत्तरायण, दक्षिणायन नामक दो आयणों का विभाजन सूर्य के काल गमन के अनुसार ही बता दिया था। संक्रांति से ही सूर्य किरणें उत्तर दिशा की ओर परिक्रमा करते है। साल में छः महीने उत्तर दिशा की ओर बाकी छः महीने दक्षिण दिशा की ओर सूर्य अपने किरणें प्रसरण करके काल गमन को चालू करता है। वैसे ही हर मास में सूर्य भगवान एक-एक राशि में संक्रमण करके बारह संक्रांति आते है। लेकिन तो 'मकर संक्रांति' विशिष्ट स्थान व ख्याति पायी है। इसी के अंतर्गत ही द्वादशादित्य भी आते है। एक-एक मास के अनुसार ही सूर्य को बारह रूपों में आराधन करना विशिष्ट योगदायक हैं। वो है - चैत्र-धाता, वैशाख-अर्यमा, जेष्ठ-मित्र, आषाढ़-वरुण, श्रावण-इंद्र, भाद्रपद-विवस्वंत, आश्वयुज-त्वष्टा, कार्तिक-विष्णु, मार्गशिर-अंशुमान्, पुष्य-भग, माघ-पूष, फाल्गुन-पर्जन्य।

अभी सारी दुनिया एक समस्या से पीडित हो रही है वही है कोविड-19, डेल्टा, डेल्टा प्लस, ओमिक्रान... नामक भयंकर वायरस सारे जगत को बाधित कर रही है। इस समस्या को हटाने केलिए हम सभी सूर्य भगवान से प्रार्थना करेंगे। इस महम्मारी से पूरी दुनिया को सुरक्षा-स्वस्थ्य प्रदान करने के लिए, सभी को स्वच्छआरोग्य प्रदान करने के लिए सूर्याराधन करना लाभ दायक है।

जपाकुसुम संकाशं। काश्यपेयं महाद्युतिम्।
तमोरिंऽ सर्वपापघ्नं। प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्।।

❖❖❖

शीश वज्र मुकुट कटी काचनी कर अभ्यास्तु मुद्रा करै।
उर वैजयंतीमाल यही श्री रूप सब के मन में बसै।।

'वंसत पंचमी' समस्त भारतीयों का परम पवित्र त्योहार है। 'वसंत' कई नामों से पुकारा जाता है - बहार, सुहावना, ऋतुराज, ऋतुपति, मधुऋतु, मधुमास आदि। वसंत ऋतु वर्ष की छः ऋतुओं में से प्रधान और प्रथम ऋतु है। नए कोमल पत्ते, लगने की और बहुत से फूल फूलने की सुंदर ऋतु वसंत है। इस मौसम में पूरा वातावरण सुहावना और मन मोहक होता है। समस्त वृक्ष और जीव राशियों में नव यौवन और नवजीवन भर जाता है।

महिमामयी प्रकृति का उत्सव है : ऋतुओं के राजा, ऋतुराज को 'वसंत' कहते हैं। अनुरागवति रति देवी की पूजा करने पर लोगों के बीच आपस में स्नेह-प्रेमानुराग बढ़कर सुख-शांति प्राप्त होती है। भारत में पूरे साल को छह ऋतुओं में बांटने की परंपरा हैं। छह ऋतु का नाम क्रमशः 1. वसंत ऋतु, 2.ग्रीष्म ऋतु, 3.वर्षा ऋतु, 4.शरद ऋतु, 5.हेमन्त ऋतु, 6. शिशिर ऋतु अर्थात पतझड़ हैं। जिनमें से वसंत ऋतु का मौसम सबसे ज्यादा सुहावना होता है और इसीलिए वसंत ऋतु को ऋतुओं का राजा यानी ऋतुराज भी कहा जाता है। क्योंकि इस मौसम में हर जगह धरती पर हरियाली होती है। इसी मौसम में गेहूँ और सरसों की खेती की जाती है और ऐसा लगता है कि गेहू के खेतों ने हरे रंग की साड़ी पहनी हो और दूसरी तरफ पीले सरसों के खेत सोने जैसे लगते है। मानो हर जगह सोना बिखेर दिया गया हो।

ऋतुओं में वसंत लोगों का सबसे मनचाहा मौसम है। जब फूलों पर बहार आ जाती, खेतों में सरसों का फूल मानो सोना जैसा चमकने लगता, जौ और गेहूँ की बालियाँ खिलने लगतीं, आमों के पेड़ों पर मांजर (बौर) आ जाता और हर तरफ रंग-बिरंगी तितलियाँ मँडराने लगतीं, तब वसंत आती है। भर-भर भंवरे भंवराने लगते। वसंत ऋतु का स्वागत करने के लिए माघ महीने के पाँचवे दिन एक बड़ा जश्न मनाया जाता है। जिसमें विष्णु और कामदेव की पूजा होती हैं। उसी को वसंत पंचमी का त्यौहार कहा जाता है।

वसंत पंचमी पर पीले रंग का महत्व : पीला रंग इस बात का द्योतक है कि फसलें पकने वाली हैं। इसके अलावा पीला रंग समृद्धि का सूचक भी माना गया है। इस पर्व के साथ शुरू

वसंत पंचमी - त्योहार

- डॉ.गाजुला शेक षा वली
मोबाइल - 9885083477

होने वाली वसंत ऋतु के दौरान फूलों पर बहार आ जाती है, खेतों में सरसों सोने की लहर चमकने लगती है, जौ और गेहूँ की बालियाँ खिल उठती हैं और इधर-उधर रंगबिरंगी तितलियाँ उड़ती दिखने लगती हैं।

वसंत पंचमी का पर्व और पौराणिक कथा : हिन्दू कैलेण्डर के अनुसार प्रत्येक वर्ष माघ मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को वसंत पंचमी का पर्व मनाया जाता है। उपनिषदों की कथा के अनुसार सृष्टि के प्रारंभिक काल में ब्रह्माण्ड के रचयिता ब्रह्माजी ने सरस्वती की रचना की थी। जिसके बारे में पुराणों में यह उल्लेख मिलता है कि सृष्टि के प्रारंभिक काल में भगवान विष्णु की आज्ञा से ब्रह्माजी ने मनुष्य योनि की रचना की। पर अपने प्रारंभिक अवस्था में मनुष्य मूक था और धरती बिलकुल शांत थी। ब्रह्माजी ने जब धरती को मूक और नीरस देखा तो अपने कमंडल से जल लेकर छिड़का जिससे एक अद्भुत शक्ति के रूप में चतुर्भुजी सुंदर स्त्री प्रकट हुई। जिनके एक हाथ में वीणा एवं दूसरा हाथ वर मुद्रा में था। यह शक्ति सरस्वती कहलाई। उनके द्वारा वीणा का तार छेड़ते ही तीनों लोकों में कंपन हो गया और सभी जीवराशियों को वाणी मिल गई।

ब्रह्माजी तथा विष्णु जी के प्रभाव से आदिशक्ति दुर्गा माता के शरीर से स्वेत रंग की एक भारी तेज शक्ति उत्पन्न हुई। जो एक दिव्य नारी के रूप में बदल गयी। वह रूप एक चतुर्भुजी सुंदर स्त्री का था। जिनके एक हाथ में वीणा तथा दूसरा हाथ वर मुद्रा में था। अन्य दोनों हाथों में पुस्तक एवं माला थी। आदिशक्ति श्री दुर्गा के शरीर से उत्पन्न तेज से प्रकट होते ही उन देवी ने वीणा का मधुरनाद किया। जिससे संसार के समस्त जीव-जन्तुओं को वाणी प्राप्त हो गई। जलधारा में कोलाहल व्याप्त हो गया। पवन चलने से सरसराहट होने लगी। तब सभी देवताओं ने शब्द और रस का संचार कर देने वाली उन देवी को वाणी की अधिष्ठात्री देवी ''सरस्वती'' कहा। फिर आदिशक्ति भगवती दुर्गा ने ब्रह्माजी से कहा कि मेरे तेज से उत्पन्न हुई ये देवी सरस्वती आपकी पत्नी बनेंगी, जैसे लक्ष्मी श्री विष्णु की शक्ति हैं, पार्वती महादेव शिव की शक्ति हैं। उसी प्रकार ये सरस्वती देवी ही आपकी शक्ति होंगी। ऐसा कह कर आदिशक्ति श्री दुर्गा सब देवताओं के देखते-देखते वहीं अंतर्धान हो गयीं। इसके बाद सभी देवता सृष्टि के संचालन में संलग्न हो गए।

सरस्वती देवी के अन्य नाम : सरस्वती, वागीश्वरी, भगवती, शारदा, वीणावादिनी, वाग्देवी आदि।

माँ सरस्वती का जन्म दिन : सरस्वती की आराधना और पूजा अनेक नामों से की जाती है। ये विद्या और बुद्धि प्रदात्री हैं। संगीत की उत्पत्ति करने के कारण ये संगीत की देवी भी हैं। वसंत पंचमी के दिन को इनके प्रकटोत्सव के रूप में भी मनाते हैं। ऋग्वेद में भगवती सरस्वती का वर्णन करते हुए यही बात कही गयी है। वसंत पंचमी को माँ सरस्वती का जन्मदिवस कहा जाता है, इसलिये इसे माँ सरस्वती के जन्मदिवस के रूप में भी मनाया जाता है।

सरस्वती का अर्थ :

सरस्वती का अर्थ है - सरः + स्वती

सरः / सरस का अर्थ है - कांति, उजाला, प्रकाश

प्रकाश 'ज्ञान' का प्रतीकात्मक चिह्न है।

'वती' का अर्थ है - भाग्य, लड़की, स्त्री, देवी आदि।

सरस्वती का संपूर्णार्थ है - प्रकाश नामक ज्ञान प्रधान करने वाली देवी। अहिंसा की अधिनायकी सरस्वती देवी है।

माँ सरस्वती देवी की पूजा-विधि :

याकुंदेंदु तुशाराहारा धवला या शुभ्र वस्त्रान्विता।

या वीणा वरदंडा मंडिता करा या श्वेता पद्मासना।

या ब्रह्माच्युता शंकर प्रभुतिभी देवै सदा पूजिता।
साममं पातु सरस्वती, भगवती निशेशा जाड्या पहः।

बचपन में बच्चों को इस श्लोक का पठन कर, विद्याभ्यास प्रारंभ किया जाता है। वसंत पंचमी के दिन देश भर में शिक्षा-विद्यार्थी और छात्र माँ शारदा की पूजा कर उनसे और अधिक ज्ञानवान बनाने की प्रार्थना करते हैं। वसंत पंचमी के दिन विद्यालयों में भी देवी सरस्वती की आराधना की जाती है। भारत के पूर्वी प्रांतों में तो इस दिन घरों में देवी सरस्वती की मूर्ति स्थापित कर उनकी पूजा बड़ी भक्ति-श्रद्धा से की जाती है। उस दिन माँ सरस्वती को सफेद वस्त्रों से फूलों से अलंकृत कर, प्रसाद के रूप में दूध, घी, नारियल, केले, गन्ना आदि निवेदन करते हैं। जिस से माँ सरस्वती खुश होकर अपने शांत नेत्रों से अपार ज्ञान राशी प्रदान करेगी, ऐसा लोगों का विश्वास है।

व्यास, वाल्मीकि आदि ने माँ सरस्वती की अनुग्रह से वेद विभाजन, पुराण ग्रंथ और काव्यों की रचना की है। प्राचीन काल के आदिशंकराचार्य भी माँ सरस्वती की पूजा कर अखंड ज्ञानी बने हैं। वसंत पंचमी के अगले दिन मूर्ति को नदी में विसर्जित कर दिया जाता है। वसंत पंचमी पर पीले वस्त्र पहनने, हल्दी से सरस्वती की पूजा और हल्दी का ही तिलक लगाने का भी विधान है।

वसंत पंचमी से नए कार्यों का आरंभ :

वसंत पंचमी के दिन मुख्य रूप से छात्र, अपनी कलमें और पुस्तकों को माँ सरस्वती के पास रख कर ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रार्थना कर, अपना विद्याभ्यास प्रारंभ करते हैं।

वसंत पंचमी के दिन कोई भी नया काम प्रारम्भ करना भी शुभ माना जाता है। जैसे - 1) पढ़ाई का प्रारंभ करना, 2) बच्चों का मुंडन संस्कार करना, 3) अन्नप्रासन संस्कार करना, 4) गृह प्रवेश करना, 5) कृषि कार्य प्रारंभ करना, 6) नए व्यापार का प्रारंभ करना। जिन व्यक्तियों को गृह प्रवेश के लिए कोई मुहूर्त नहीं मिल रही हो रहा हो उन्हें इस दिन को गृह प्रवेश कर सकते हैं। या फिर कोई व्यक्ति अपने नए व्यवसाय को आरम्भ करने के लिए शुभ मुहूर्त को तलाश कर रहा हो तो वह वसंत पंचमी के दिन अपना नया व्यवसाय आरम्भ कर सकता है। इसी प्रकार अन्य कोई भी कार्य जिनके लिए किसी को कोई उपयुक्त मुहूर्त न मिल रही हो तो वह वसंत पंचमी के दिन वह कार्य कर सकता है। वसंत ऋतु अनुराग-प्रेम की ऋतु है। इस ऋतु में काम देव की पूजा भी की जाती है। काम देव की पत्नी रति देवी की पूजा करने पर लोगों के बीच आपस में स्नेह-प्रेमानुराग बढ़कर सुख-शांति प्राप्त होती है, ऐसा भी विश्वास है।

वसंत पंचमी के दिन निम्न कार्य करना निषेध :

1) पेड़-पौधों को काटना मना है। 2) मंगल स्नान के बिना भोजन नहीं करना। 3) मांस खाना-मदिरा पीना मना है। 4) अपशब्द न कहना। 5) लाल वस्त्र पहनना।

वसंत पंचमी त्योहार का महत्व :

भारतीय भक्ति-साधना अनुपम और अप्रतिम है। उस में देवी-देवताओं के साथ पूरी सृष्टि को भी अद्वितीय स्थान है। प्रकृति, जीव-जंतु समेत पूरी सृष्टि की पूजा-वंदना करने का महती विधान भारतीय भक्ति साधना में है। वसंत पंचमी प्रकृति का त्योहार है। भारतीय भक्ति में प्रकृति प्रेम भी अपार है। वसंत आगमन से पूरी सृष्टि पुलकित होती है। माँ सरस्वती के आशीर्वाद से समस्त जगत सुखी जीवन को प्राप्त करता है। वसंत पंचमी के पीछे भारतीयों का यही उच्च आशय है। वसंत पंचमी के दिन वसंतोत्सव मनाने की दीर्घ परंपरा भारत में है।

वास्तव में वसंतोत्सव रंगों का त्योहार है। रंग प्रकृति प्रदत्त है। जीवन में कितने भी परिवर्तन आये रंग तो वे ही हैं। वसंत पंचमी मानव को प्रकृति से जोडने का अमूल्य पर्व है। आदमी जो प्रकृति से प्रेम करते आया है। उसे फिर से एक बार प्रकृति के साथ जीने से होनेवाले प्रयोजनों को बतानेवाला त्योहार है। जिस रूप में ऋतुओं में राजा वसंत ऋतु है। उसी रूप में भारतीय पर्वों में वसंत पंचमी का विशिष्ट महत्व है।

संप्रदाय और परंपरा के प्रति गौरव रखनेवाले प्रत्येक भारतीय को वसंत पंचमी के पर्व के महत्व के बारे में जानने की आवश्यकता है। प्रकृति के प्रति सही ज्ञान रखने की आवश्यकता भी है। भूत दया भक्ति के मार्ग में महत्वपूर्ण समझी जाती है। प्रकृति के प्रति भूत दया को बढानेवाली वसंतपंचमी का त्योहार भारतीय त्योहारों में इसलिए अद्वितीय है। भारत में वसंतोत्सव वसंत पंचमी से प्रारंभ होकर होली त्योहार तक मनाया जाता है। दक्षिण भारत देश में सुप्रसिद्ध पुन्य क्षेत्र तिरुमल में वसंतोत्सव बड़े धूम-धाम से मनाया जाता है। उस दिन वसंत मंडप को विभिन्न रंगों के और सुगंध भरे फूलों से और रंगीन बत्तियों से सजाते हैं। यह त्योहार तीन दिन अत्यंत श्रद्धा भक्ति से मनाया जाता है। इन दिनों में नित्य किये जाने वाले अन्य अर्जित सेवाएँ प्रायः रद्ध की जाती हैं। इस उत्सव को श्री बालाजी के सालकट्ला वसंतोत्सव कहते हैं।

प्रथम दिन : इस दिन श्री मलयप्पस्वामी अपनी दोनों देवियों समेत तिरुमाडावीथियों में भक्तों को पुण्य दर्शन देते हैं। भक्त स्वामी के दर्शन कर अपनी मनोकामनाओं की सिद्धि के लिए प्रार्थना करते हैं।

दूसरे दिन : दूसरे दिन स्वामी अपनी दोनों देवियों सहित तिरुमाडा वीथियों में भक्तों के दर्शन देकर वसंत मंडप में अभिषेक स्वीकार करते हैं।

तीसरे दिन : स्वामी अपनी देवी-द्वयों सहित श्रीराम, सीता, लक्ष्मण, हनुमान, श्रीकृष्ण, रुक्मिणी सहित तिरुमाडावीथियों में भक्तों को दर्शन देकर, वसंत मंडप में अभिषेक स्वीकार करते हैं।

अत्यंत वैभवपूर्ण ढंग से तिरुमल पुण्य क्षेत्र में संपन्न होनेवाले इस वसंतोत्सव में सभी भक्तजनों को अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति करने का विशेष अवसर है। वसंतोत्सव को मनाने से समस्त जगत सुख-शांति और समृद्धि से भर उठेगा। इसी उद्धाशय से ही वसंतोत्सव मनाया जाता है। विश्व शांति का संदेश देनेवाला वसंतोत्सव पर्व भारतीय पर्वों में अन्यतम स्थान रखता है।

लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु!

रथसप्तमी

- डॉ.एच.एन.गौरीराव
मोबाइल - 9742582000.

सूर्य के प्रकाश से चराचर जगत और जीव कोटि जीवित है। सूर्य के ताप से भूमि उर्वरा बनती है। इससे प्रकृति में सूर्य प्रत्यक्ष देव कहा जाता है, जो सब ग्रहों के अधिपति हैं। हमारे धर्म ग्रंथों में उद्धृत है -

उदये ब्रह्मरूपश्च। मद्याह्नेतु महेश्वरः।
अस्तकाले स्वयं विष्णुः। त्रिमूर्तिश्च दिवाकरः।।

अर्थात भगवान सूर्य हर दिन प्रातःकाल ब्रह्म स्वरूप में, मध्याह्न महेश्वर स्वरूप में और शाम को विष्णु स्वरूप में इस जगत का पालन करते है।

भारत में अनेक त्यौहार प्रकृति पर और प्रकृति के परिवर्तनों पर आधारित है। इनमें से रथसप्तमी एक प्रमुख त्यौहार है। रथसप्तमी सूर्य भगवान को समर्पित त्यौहार है, जिसे पूरे भारत में मनाया जाता है। मकर संक्रांति से भगवान सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण की ओर गमन करना आरंभ करते है। वेदों में 'हिरण्मयेन सविता रथेन' कहा गया है। इस माघ मास के सातवें दिन सूर्य सात घोड़ों को लेकर सुनहरे रथ पर विराजमान होकर उत्तर की ओर मुड़ते है। इस त्यौहार का आचरण ऋग्वेद के काल से हो रहा है। इस रथसप्तमी के महत्व के बारे में अग्निपुराण, ब्रह्म पुराण, नारद पुराण, स्कंद पुराण, मत्स्य पुराण, शिव पुराण और भविष्य पुराण आदि में भी वर्णन मिलता है। भविष्योत्तर पुराण में इस त्योहार के विधि-विधान का प्रस्ताव मिलता है।

शिशिर ऋतु की सर्दी के बाद सूर्य की किरणें धरती पर पडने पर प्रकृति एक नव चेतना से भर जाती है। इस दिन से भूमि सूर्य के समीप आना आरंभ होती है। इससे इस दिन से भूमि को सूर्य की अपार शक्ति मिलती है। जब सूर्य की तीक्ष्ण किरणें धरती पर पडना आरंभ होता है, तब माघ मास का आरंभ होता है। यह पर्व गर्मी के आगमन का और दक्षिणी भारत में मौसम में परिवर्तन का संकेत देता है। यह पर्व किसानों के लिए फसल की कटाई के आरंभ का भी प्रतीक है। उत्तरायण में आने वाला पहला पर्व रथसप्तमी है। रथसप्तमी का आचरण सूर्य की पूजा करके किया जाता है। इस त्यौहार के अन्य लोकप्रिय नाम ये हैं - माघ सप्तमी, माघ जयंती, सूर्य जयंती, अचला सप्तमी, विधान सप्तमी और आरोग्य सप्तमी। यह सप्तमी अगर रविवार को पड़ती है, तो यह 'भानु सप्तमी' भी कहा जाता है। शैव और वैष्णव तथा सभी संप्रदाय के लोग भक्तिपूर्वक रथसप्तमी का आचरण करते हैं।

हमारे आध्यात्मिक ग्रंथों के अनुसार कुल मिलाकर बारह आदित्य है; अर्थात बारह सूर्य हैं। साल में हर एक महीने में एक-एक सूर्य की प्रधानता होती है। सूर्य के ताप की क्षमता के आधार पर विविध मासों में सूर्य के विविध नाम है-

1) चैत्र मास में 'धाता', 2) वैशाख में अर्यमा, 3) जेष्ठ में मित्र, 4) आषाढ में वरुण, 5) श्रावण में इंद्र, 6) भाद्रपद में विवस्वंत, 7) आश्वयुज में त्वष्टा, 8) कार्तिक में विष्णु, 9) मार्गशिर में अंशुमान्, 10) पुष्य में भग, 11) माघ में पूष, 12) फाल्गुण में पर्जन्य।

वेदों के अनुसार सूर्य सात अश्वोंवाले रथ पर लोक संचार करते हैं। ऋग्वेद में उल्लेख किया गया है कि 'सप्तयुञ्ज़ंति रथमेकचक्रमेको अश्वोवहति सप्तनामा' अर्थात सूर्य एक चक्रवाले रथ पर सवार होते हैं, जिसे सात घोड़े खींचते हैं। उन सात अश्वों के नाम इस प्रकार है - 1) गायत्री, 2) त्रिष्णुप्पू, 3) अनुष्टुप्पू, 4) जगति 5) पंक्ति 6) बृहति 7) उष्णिक्कु।

ये सात अश्व सात दिनों (रविवार से शनिवार तक) के प्रतीक माने गए है। कहीं-कहीं इन सात अश्वों को इंद्रधनुष के रंगों से तुलना की जाती हैं, जो सूर्यकांति के विक्षेपण से बनता है। पुराणों के अनुसार सूर्य रथ (जो कालचक्र कहा जाता है) के चक्र की धुरियां दिन और रात के प्रतीक है। उस चक्र के छः तीलियाँ छः ऋतुओं का और ध्वज धर्म का प्रतीक है। इस दिन कश्यप (प्रजापति) ऋषि और अदिति के पुत्र के रूप में सूर्य का जन्म हुआ था, जो स्वर्ण रथ में प्रकट हुए थे। माना जाता है कि भगवान सूर्यदेव ने इसी दिन से सारे जगत को अपने तेज से प्रकाशमय किया था। इस प्रकाश से जीव-जंतुओं और पेड़-पौधों का जन्म तथा विकास हुआ था। सूर्यरथ की अनेक विशेषताओं के कारण से और माघ सप्तमी के दिन रथ को उत्तरी दिशा की ओर मोडने के कारण से, यह दिन सूर्य जयंती न होकर 'रथसप्तमी' कहलाता है। सूर्यरथ के सारथी अनूर है। इससे सूर्योदय से पहले आकाश में जो लालिमा फैलती है वह अरुणोदय कहलाता हैं।

व्रत कथा :
रथसप्तमी पौराणिक गाथा :

रथसप्तमी की कथा द्वापर युग से संबन्धित है। व्रत कथा इस प्रकार चलती है। श्रीकृष्ण को सांबा नामक एक पुत्र था। श्रीकृष्ण के इसी पुत्र के कारण से यदुकुल का सर्वनाश हो गया। वह अपनी दुष्टता और अभिमान के लिए प्रसिद्ध था। एक भार दुर्वास मुनि श्रीकृष्ण से मिलने आए। उनके शुष्क शरीर को देखकर सांबा ने उनका अपहास किया। इससे दुर्वासमुनि क्रुद्ध होकर सांबा को कोढ (कुष्ठ) रोग से पीडित होने का शाप दिया। कोढ रोग से पीड़ित सांबा श्रीकृष्ण से उपाय बताने की प्रार्थना की, ताकि वह निरोगी बन जाए। रोग से मुक्ति के लिए श्रीकृष्ण ने सांबा को भगवान सूर्यदेव की आराधन करने को कहा। श्रीकृष्ण की सलाह प्राप्त कर सांबा ने सूर्यदेव की विधि-विधान के साथ आराधना की। सांबा ने 12 वर्षों तक कोणार्क के मित्रवन में चंद्रभागा नदी के संगम पर तपस्या की। सूर्यदेव ने प्रसन्न होकर सांबा को पूरी तरह स्वास्थ्य को प्रदान किया।

इसलिए सूर्यदेव 'आरोग्यदाता' भी कहलाते हैं। सांबा ने कोणार्क में सूर्य मंदिर का निर्माण विश्वकर्मा से बनवाया और चंद्रभागा नदी में प्राप्त सूर्य की मूर्ति को मंदिर में स्थापित किया। रथसप्तमी के दिन सूर्यदेव की विशेष रूप से अलंकार और पूजा की जाती है। एक और कथा के अनुसार सप्तमी व्रत कथा श्रीकृष्ण से युधिष्ठिर को बतायी गयी थी। श्रीकृष्ण युधिष्ठिर को सुनाते हैं कि प्राचीन काल में कांबोज देश में यशोवर्मा नामक एक राजा था। उनका एक पुत्र था, जो हमेशा रोगग्रस्ता रहता था। अपने पुत्र की स्थिति से दुःखित राजा ने ब्राह्मणों से परिहार पूछा। ब्राह्मणों ने उन्हें बताया कि "हे प्रभु! आपका पुत्र गत जन्म में एक लोभी वैश्य था। लोभी प्रवृत्ति से वह रोगग्रस्त हो गया है। परन्तु वह रथसप्तमी व्रत भक्तिपूर्वक करता था। इसलिए इस जन्म में उसने राजवंश में जन्म लिया।" राजा ब्राह्मणों से प्रार्थना की, "इस दोष परिहार बताने की कृपा करें।" तब ब्राह्मणों ने राजा को यह सलाह दी कि "हे राजन!

जिस रथसप्तमी व्रत करने से उसका जन्म राजवंश में हुआ है, उसी व्रत से उसके पाप का भी प्रायश्चित होगा, और आगे चलकर इस पुण्य से वह चक्रवर्ती बनेगा।'' राजा ने ब्राह्मणों के हित वचनों के अनुसार अपने पुत्र से रथसप्तमी व्रत का आचरण करवाया, जिससे वह रोग मुक्त हो गया और आगे चलकर वह लोकप्रिय राजा बना।

पवित्र स्नान-पानी में खड़े होकर भगवान की प्रार्थना करें :

रथसप्तमी के दिन पवित्र संगम क्षेत्र में पानी में खड़े होकर सूर्य भगवान को और सप्तमी तिथि को अंजलि देने से सकल सुख, शांति, आयु और आरोग्य प्राप्त होते हैं। क्योंकि रथसप्तमी की प्रथम सूर्य किरणें संगम के जल में पड़ने पर पानी दिव्य शक्तियुक्त तीर्थ बन जाता है। विश्वास किया जाता है कि उस तीर्थ में स्नान करने से अपार शक्ति मिलती है। यह वैज्ञानिक रूप से भी प्रामाणित है। सूर्य के अभिमुख पानी में खड़े होकर अंजलि देने से, सूर्य की किरणें शरीर पर पड़ने से विटामिन-डी मिलती है, जो हमारे स्वास्थ्य को बनाए रखती है। इसलिए वेदों में संध्यावंदन, सूर्य नमस्कार और अर्घ्यप्रदान को प्राथमिकता दी गयी है।

सूर्य को अर्घ्य देते समय इस मंत्र का उच्चारण करना चाहिए-

सूर्य अर्घ्य मंत्र :

''सप्तसप्तिवहप्रीत सप्तलोकप्रदीपना।
सप्तमी सहितो देव गृहाणार्घ्यम दिवाकरा।''

सप्तमी अर्घ्य मंत्र :

''जननी सर्वलोकानाम सप्तमी सप्त संपत्ति के।
सप्तव्याहृतिके देवि नमस्ते सूर्यमंडले।।''

अर्क पत्र रखकर स्नान :

नदी में स्नान नहीं कर सकते हैं तो घरों में अरुणोदय में माने सूर्योदय से पहले स्नान करना चाहिए। कहा जाता

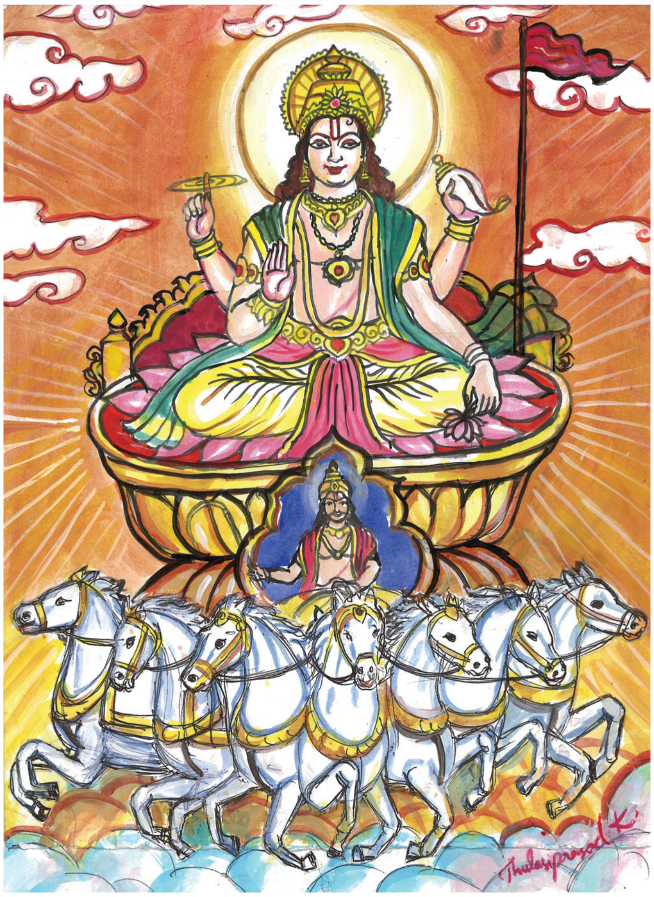

है कि अर्क पत्र सूर्यदेव के कंधों और रथ के सात आश्वों के प्रतीक है। इससे सूर्य देव को 'अर्काय नमः' कह कर स्तुति की गई है। अर्क, सेम पत्तों और बदरी के फलों में सूर्य की शक्ति अत्यधिक होती है। धर्म शास्त्रों के अनुसार इन अर्क पत्रों को और बदरी फलों को शरीर पर रखकर स्नान करने से सात जन्मों का पाप मिटता है, और सात रोगों से मुक्ति मिलती है। स्नान के दौरान सात पत्तों को लेकर - एक सिर पर, दो कंधों पर, दो घुटनों पर और दो पैरों पर रखकर स्नान किया जाता हैं। स्नान करते वक्त आत्माकारक सूर्य भगवान के इस मंत्र का स्मरण किया जाता है -

''यद्यत्जन्म कृथम पापम मया जन्मसु सप्तसु
तन्मे रोगंच शोकंच माकरी हंतु सप्तमी।
एतज्ञन्मं कृतम पापम यच्च जन्मांतरार्जितम
मानोवाक्कायजम यच्चत् ज्ञाताज्ञातेच ये पुनः।

इति सप्त विधम् पापम स्नानान्मे सप्तसप्तिके
सप्तव्याधि समायुक्तम हरमाकरी सप्तमी।।''

रथसप्तमी के दिन से सर्दी कम होकर गर्मी का आरंभ होता है। आयुर्वेद के अनुसार इस ऋतु परिवर्तन की अवधि में अर्क पत्र को देह पर रखकर स्नान करने पर गर्मी से होने वाले चर्म रोगों का निवारण होता है।

सूर्य नमस्कार :

इस दिन प्रातःकाल को सूर्य के सम्मुख सामूहिक रूप से 108 बार सूर्य नमस्कार किया जाता है। सूर्य नमस्कार से शरीर के अंग अंगों में सूर्य के तेज को प्राप्त कर सकते हैं। जो इस दिन सूर्य के अभिमुख होकर सूर्य नमस्कार करता है, वह निरोगी होता है। रथसप्तमी के दिन सूर्य नमस्कार के साथ द्वादश नामों का उच्चारण करने से उत्तम आरोग्य मिलता है।

कैसे करें सूर्य की पूजा :

दक्षिण भारत में रथसप्तमी को इस प्रकार मनाते हैं -

माघ शुद्ध षष्टि के दिन तिल को पीसके शरीर पर लगाके स्नान किया जाता है। उस दिन उपवास रहकर मंदिर जाकर पूजा की जाती है। अगले दिन अर्थात सप्तमी तिथि को सूर्योदय से पहले स्नानादि से निवृत्त होकर तन मन से पवित्र होकर घर की उत्तरी दिशा में तुलसी पौधे के सामने गाय के घी से दीप जलाये जाते हैं। रथसप्तमी के प्रतीक के रूप में एक रथ और सात घोड़ों को दर्शाते हुए रंगीन रंगवल्ली का चित्रण किया जाता है। तुलसी के सामने जहाँ सूर्य रश्मि अच्छी तरह से पड़ती है, वहाँ चूल्हे को रखकर संक्रांति के समय रखे गये गाय के उपले को जलाके और उस आग में तांबे की कड़ाई में तीन बार उबाले गये गाय के दूध में चावल और गुड, घी और इलैची को डाल दिया जाता है। ईख की टुकड़ी से उस मिश्रण को मिलाते हुए क्षीरान्न (भोग) को तैयार किया जाता है। सात सेम फलों से रथ का आकार तैयार किया जाता है, जो सूर्यरथ का प्रतीक है। उसके सामने सात सेम के पत्तों में सूर्य के लिए भोग को रखते है। भगवान सूर्य को लाल रंग के फूलों से पूजा करके दीप, गंध और धूप को चढ़ाके, नैवेद्य अर्पित करके, कपूर के दीप से आरती की जाती है। इस अवसर पर आदित्यहृदयम्, सूर्याष्टकम, सूर्य सहस्रानाम आदि का पाठन होता है। रथसप्तमी के दिन 'आदित्य हृदयम' के पाठ करने से शरीर में नव चैतन्य उदित होकर हर काम में सफलता प्राप्त कर सकते हैं। रामायण में उल्लेख है कि राम-रावण के युद्ध के समय व्यथित राम को अगस्त्य महामुनि से 'आदित्य हृदयम' का उपदेश प्राप्त हुआ था, जिसका अनुष्ठान करके श्रीराम ने युद्ध को जीता। कहा जाता है कि आदित्य हृदयम इतना प्रबल मंत्र है कि इसके उच्चारण से शारीरिक और मानसिक स्वस्थ्य को सुधार सकते हैं। इस दिन दान कर्म करने से सूर्य ग्रहण में दान करने जैसे पुण्य फल प्राप्त होता है।

आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और महाराष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों में तथा ओडिशा के कोनार्क सूर्य मंदिर में रथसप्तमी के दिन मंदिरों में भव्य उत्सव आयोजित किए जाते हैं। तिरुपति क्षेत्र में रथसप्तमी के दिन भगवान श्री वेंकटेश्वर के सात-वाहनों की सेवा की जाती है। सात भिन्न-भिन्न वाहनों पर आरूढ होकर सूर्यनारायण अवतारी श्री वेंकटेश्वर भक्तजनों को पुण्य दर्शन देते हैं। इसलिए तिरुमल पहाड पर रथसप्तमी को एक दिन के ब्रह्मोत्सव के रूप में माना जाता है।

त्योहार हर वर्ष आते हैं। परंतु उनके आचरण के पीछे वैज्ञानिक अंश के ज्ञान प्राप्त करने के बाद अर्थपूर्ण आचरण होता है। 'आरोग्यम भास्करादिच्चेत्।' कहा जाता है। अर्थात रथसप्तमी पर्व के समय में सूर्य भगवान की विधिपूर्वक श्रद्धा, भक्ति समेत आराधना करने से स्वास्थ्य, मान-सम्मान और मनोकामना पूर्ण होती है, और संतान प्राप्ति के लिए भी इसका आचरण किया जाता है। यह विज्ञान के हिसाब से भी साबीत हुआ है। माना जाता है कि इस दिन व्रत करने से संपूर्ण माघ मास के स्नान का फल प्राप्त होता है।

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(षष्टम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि. तापडिया
मोबाइल - 9449517879

115

श्रीमते रामानुजाय नमः

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि हे मुमुक्षु महात्माओं! ''सर्वधर्मान्परित्यज्य'' गीता के सारभूत इस चरम श्लोक में भगवान खुद श्रीमुख से शरणागत होने वालों के लिए आज्ञा करते हैं कि शरण होने वालों को चाहिए कि सबसे पहले सर्वधर्मों का परित्याग कर दे बाद हमारी शरणागति करे। देखिए, इस श्लोक का अर्थ समझने में बहुत सावधानता से रखनी चाहिए नहीं तो बड़ा भारी अनर्थ हो जाय। क्योंकि पहले श्रीमुख से भगवान आज्ञा कर आये हैं कि :-

''धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।''

याने हे अर्जुन! धर्मों की स्थापना के लिये युग-युग में मैं अवतार धारण करता हूँ। और वही भगवान कहते हैं कि :- *''सर्वधर्मान्परित्यज्य''*

याने सब धर्मों का परित्याग करके हमारी शरणागति करो। इन दोनों श्रीमुख वाणी की संगति लगाकर इस प्रसंग को सुलझाना चाहिए। बहुत ऐसे हैं कि बड़ों के द्वारा तो इसका अर्थ सुने नहीं, स्वयं संगति लगा नहीं सकते इससे अर्थ का अनर्थ कर देते हैं। ये नहीं जानते कि शास्त्रों की शैली बिना भगवत्कृपा पात्रों के कोई नहीं लगा सकता है। बड़े-बड़े भगवत्कृपापात्र शरणागति शास्त्र के पारंगत महापुरुषों ने इस प्रसंग की जिस प्रकार संगति लगाई है उसी प्रकार आप लोगों की सेवा में निवेदन करता हूँ। यह शरणागतों के लिए अत्यन्त जरूरत की चीज है। यह जाना तो सब जाना। बहुत शरणागत भलीभांति इस प्रसंग को सद्गुरुओं के द्वारा नहीं समझ लेने के कारण शरणागति से मिलने वाले फल से वंचित रह जाते हैं। इससे इस प्रसंग को कहते सुनते समय चित्त को एकाग्र कर लेना चाहिए। भगवान का श्रीमुख वचन है कि :-

''नहिं देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्य शेषतः।
यस्तु कर्मफल त्यागी सत्यागी त्यभिधीयते।।''

भाव यह भया कि हे अर्जुन! देहधारी मात्र किसी प्रकार भी सब कर्मों का त्याग नहीं कर सकते, इससे भगवत् आज्ञा मानकर जो स्वरूपानुरूप कर्मों को करते हैं और उसके फलों की चाहना नहीं करते हैं इसीका नाम कर्मों का त्याग है।

''अहंकार विमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते।''

अर्जुन! जिन लोगों का अहंकार से आत्मा मलीन हो गया है वे ही अपने को स्वतन्त्र कर्ता मानते हैं। भगवान की इस श्रीमुख वाणी से ''सर्वधर्मान्परित्यज्य'' इस पद का यही अर्थ भया कि स्वरूपतः तो धर्म का त्याग नहीं करना चाहिए किन्तु स्वरूपानुरूप धर्मों को करते हुए सिर्फ उसमें से कर्त्तृत्व और भोक्तृत्वाहंकार त्याग देना चाहिए। यहाँ पर भगवान की तरफ से अपने आश्रितों के लिए सर्व धर्म त्याग पूर्वक जो शरणागति करने की आज्ञा दी जा रही है इसका यही भाव है कि मोक्ष के लिए उपाय भावना से जो कर्म, ज्ञान, भक्ति रूप धर्म को करने को कहे हैं सो उन में से उपाय बुद्धि का परित्याग कर और कैंकर्य भावना से करो। अचिद्वत्परतन्त्र अनन्यशरणत्व आत्मा का स्वरूप है। इस प्रकार स्वरूप ज्ञान को भलीभांति नहीं समझे हुए जो अपने को स्वतन्त्र कर्ता मानकर कर्मज्ञान भक्ति को मोक्ष का साधन मानकर अनुष्ठान करते हैं, यह आत्मा अचिद्वत्परतन्त्र है। अनन्य शरणत्व इसका स्वरूप है। यह जीव माया बन्धन

से इस प्रकार से जकड़ा हुआ है कि बिना भगवान की दया के अपने कर्तव्यों के बल से न तो अनादिकाल से आज-तक छुटकारा पा सका है, न अपने कर्तव्यों के बल से अनन्तकाल तक किसी प्रकार भी पाने की सम्भावना है। पहले तो साधना का स्वरूप ही समझना महा मुश्किल है। क्योंकि ''गहना कर्मणोगतिः'' ''कवयोऽप्यत्र मोहिताः'' कर्मों की गति दुर्ज्ञेय है, बड़े-बड़े कवि लोग भी इसमें मोहित हो जाते हैं याने इसके समझने में चकरा जाते हैं। एक तो कर्म का स्वरूप ही समझना अशक्य है फिर किसी प्रकार करोड़ों में एक कोई समझ भी जाय तो उसके करने में इतनी उलझन है याने इतने शर्त हैं कि इस परवश जीव से अनेक प्रकार से प्रयत्न करने पर भी किसी तरह कर्म योग की सिद्धि नहीं होगी और बिना परमपद गये यह जीव कभी सुखी नहीं होगा। इस तरह से साधन का स्वरूप और उसकी कठिनता तथा उसके करने में अपनी असमर्थता भलीभांति जो समझ जाते हैं वे अधिकारी साधन भावना छोड़, अपने को प्रधान कर्त्ता न मान, मैं परमात्मा के अधिकार में हूँ। कर्म, ज्ञान, भक्ति करने की उनकी आज्ञा है। इसलिए उनके तरफ से जितनी हममें शक्ति दी गई है उसके अनुसार उनकी आज्ञा पालना करना हमारा स्वरूप है याने परम कर्तव्य है। इस तरह से विचार करके स्वरूप ज्ञानी कर्तृत्वाभिमान तथा भोक्तृत्वाभिमान छोड़ कर्म, ज्ञान, भक्ति को करते हैं और संसार बन्धन से छूटकर परमपद में जाकर युगल सरकार की नित्य सेवा मिलने के लिए भगवान की निर्हेतुक कृपा को साधन मानकर रहते हैं। और भी अनेक महापुरुषों के वचन हैं जैसे :- *''प्रापकान्तरमज्ञानामुपायः''*

याने भवसागर से पार होने के लिए जो भगवान की निर्हेतुक कृपा को छोड़कर कर्म, ज्ञान, भक्ति को साधन मानकर करते हैं, वे अज्ञ हैं। अर्थात् कर्मादिकों का स्वरूप उनकी कठिनता तथा उलझनें और काल, कर्म, गुण, स्वभाव, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि से जीव की परतन्त्रता अतः इनको सिद्ध करने में अपनी असमर्थता इत्यादि बातों को वे नहीं जान पाये हैं इसी कारण से स्वरूपानुरूप सरल से सरल सिद्ध उपाय जो परमात्मा हैं उनका भरोसा छोड़कर परतन्त्र, स्वरूप से विरुद्ध जो दुर्गम उपाय हैं उसमें प्रवृत्त होते हैं और -*''ज्ञानिनामपायः''* - अर्थात् इस कारण ज्ञानियों के लिए तो प्रापकान्तर याने उपायान्तर कर्मादिकों में उपाय भावना से प्रवृत्ति उपाय है, अनर्थ स्वरूप है।

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि उपासक लोग याने उपायान्तरी कर्मादिकों को किस तरह करते हैं और भगवान के शरणागत लोग किस तरह करते हैं। इसका स्पष्ट आगे निर्णय करते हैं। साधन स्वरूप जो नवधा भक्ति है उसीको उपायान्तर भी कहते हैं। कर्म, ज्ञान, उसीका अंग है। इस नवधा भक्ति का शास्त्रों में दो प्रकार का आकार बताया है। एक साधनाकार दूसरा फलाकार। मुक्ति का साधन मान उपायान्तरी लोग भगवत् चरित्र श्रवण करते हैं और शरणागत साधन तो भगवान को मानते हैं तथा चरित्र को फलस्वरूप मान कर श्रवण करते हैं। उसी प्रकार स्वतंन्त्र अधिकारी भगवान का कीर्त्तन मोक्ष का साधन मानकर करते हैं और शरणागत अधिकारी नाम कीर्त्तन तथा नाम जप को फल भावना से करते हैं। उपायान्तरी लोग भगवान के स्मरण को परलोक का साधन मानकर करते हैं और प्रपन्न लोग फल मानकर करते हैं। भगवान की चरण सेवा को प्रापकान्तरी लोग गोलोक का साधन मानकर करते हैं और शरणागत लोग फल भावना से करते हैं उपासना वाले भगवान की सेवा पूजा श्रीवैकुण्ठ का साधन मानकर करते हैं और शरणागत लोग कैंकर्य भावना से करते हैं। भक्तलोग भगवान के साष्टांग प्रणाम को मुक्ति का साधन मानकर करते हैं और भागवत अपना फल समझकर भगवद्-भागवताचार्यों को साष्टांग प्रणाम करते हैं। उपायान्तरी भगवान के साथ सख्य भावना को परलोक का साधन मानते हैं और भागवत लोग परलोक का साधन तो श्री सीताराम जी को ही मानते हैं और सख्य भावना को स्वयं प्रयोजन रूप माना करते हैं। उसी प्रकार साधनान्तरी लोग भगवान के श्रीचरणों में आत्म समर्पण की परमपद मिलने का साधन मानते हैं और शरणागत लोग परमपद मिलने का साधन तो श्यामसुन्दर को मानते हैं और भगवान के श्रीचरणों में आत्म समर्पण को फल स्वरूप माना करते हैं।

क्रमशः

मंदोदरी

(मिथ की महिला चरित)

-डॉ.के.एम.भवानी,
मोबाइल - 9949380246.

अहल्या द्रौपदी सीता तारा मंडोदरी तथा।

पंचकन्यः स्मरेन्नित्यम महापातक नाशनम।।

इस प्रचलित श्लोक के अनुसार मंदोदरी उन पाँच कन्याओं में एक मानी जाती है। जो अपने व्यक्तित्व और चरित्र के लिए स्त्री-लोक में प्रसिद्ध हैं। यह भी मान्यता है कि हर दिन उन कन्याओं का नाम स्मरण करने से पुण्य प्राप्त होता है। वास्तव ये पांचों कन्याओं के रूप में नहीं बल्कि विशेष चरित्रवाली स्त्रियों के रूप में पुराणों में वर्णित हैं। इन्हें किस आधार पर कन्याएँ समझा गया हैं। इसके बारे में मतभेद हैं।

मंदोदरी लंकाधिपति रावण की पटरानी है। मायासुर और अप्सरा हेमा उसके माता-पिता हैं। मंदोदरी की पूर्व कहानी कुछ इस प्रकार है।

मंदोदरी का पूर्व जन्म वृत्तांत : मंदोदरी पहले मधुरा नामक एक देवकन्या थी। वह शिव भक्तिन थी। वह एक बार विहरण करती हुई कैलाश पर्वत पर पहुँचती है। उस समय माता पार्वती वहाँ मौजूद नहीं थीं। मधुरा भगवान शिव की ओर आकर्षित होती है। मोह-दृष्टि से शिव भगवान की ओर देखती है। तभी माता पार्वती वहाँ आती हैं और मधुरा का बुरा विचार जानकर उसे मेंढक बनकर रहने का शाप देती है। लेकिन मधुरा की प्रार्थना पर महादेव, भक्तवत्सल भगवान शिव उसे 12 साल के बाद फिर से निज रूप धारण करने का वर देता है। उसी समय मधुरा मेंढक बनकर एक कुएँ में पड़ी रहती है तब से 12 साल तक शिव की तपस्या करने के बाद वह फिर सुंदर कन्या बन जाती है। कुएँ से बाहर निकालने के लिए आवाज करती रहती है। उसी समय उधर से निकलने वाले मायासुर और हेमा दंपति उसकी आवाज सुनकर उसे कुएँ से बाहर निकाल कर अपने साथ ले जाते हैं। वे उसे अपनी कन्या के रूप में पालन-पोषण करते हैं। वही कन्या बाद में 'मंदोदरी' के नाम से पुकारा गया है।

जब एक बार रावण मायासुर से मिलने आता है। तब वह मंदोदरी को देखता है और उसकी सुंदरता पर मुग्ध होकर मायासुर से मंदोदरी का हाथ माँगता है। मायासुर भी रावण के बारे में जानने के कारण शादी के लिए मान जाता है। मंदोदरी रावण की पत्नी बन जाती हैं। रावण और मंदोदरी को तीन पुत्र पैदा हुए मेघनाथ (इंद्रजित), अक्ष कुमार और अतिकाय।

जब रावण सीता माता को अपहरण करके लंका में लाता है, तब से समय-समय पर मंदोदरी सीता को वापस श्रीराम को सौंपने की विनति करती रहती है। लेकिन रावण उसकी बातों पर ध्यान नहीं देता है।

सीता रावण की बातों में न आकर उसे अपमानित करके इनकार करने पर रावण अत्यंत क्रोधित होकर उसे मारने को तैयार हो जाता है। तब मंदोदरी ही उसे रोक कर समझाती है कि स्त्री की हत्या करना गलत है। हेय की बात भी है।

अंत में रावण श्रीराम से हुए युद्ध में वीरगति को प्राप्त करता है। तब मंदोदरी युद्ध भूमि में प्रवेश करके रावण की लाश को देखकर बहुत दुखित हो जाती है।

रावण की मृत्यु पर शोक प्रकट करती हुई मंदोदरी जो बातें कहती है वे उसके निराले व्यक्तित्व को दर्शाती हैं। उनके सात्विक विचार कुछ इस प्रकार हैं।

मंदोदरी को मालूम है कि रावण महान वीर है। देव, दानवों में कोई उसे कुछ नहीं

कर सकता है। इसलिए वह यही कहती है कि हे महा बाहु! तेरा निधन कैसे संभव हो गया है? जंगलों में घूमनेवाला एक मानव तुम्हें कैसे मार सका? लगता है कि यह कोई साधारण मानव नहीं है। तुम्हें मारने के लिए ही आया इंद्र या यमराज ही होगा। लेकिन इंद्र को तो आपके सामने आने की हिम्मत ही कहाँ है? इसलिए यह श्रीराम जरूर श्री महाविष्णु ही होगा जो लोक कल्याण के लिए तुम्हें मारा होगा।

रावण की मूर्खता को याद करती हुई वह विलाप करती है कि विभीषण, कुंभकर्ण और उसके पिता मायासुर और स्वयं सीता को वापस करने केलिए रावण को समझाने में क्यों और कैसे विफल हो गए? इस से अधिक जब वानर हनुमान लंका में प्रवेश कर अशोक वाटिका का नाश करके, लंका को जलाकर गया और श्रीराम ने वानरों की सहायता से सागर पर पुल बांधकर लंका में प्रवेश किया। तब भी मंदोदरी रावण से सीता को वापस श्रीराम को लौटाने की बहुत-बहुत समझाने की कोशिश करती है। लेकिन रावण ने उसकी एक न सुनी।

वह इतने दुख में भी विवेकपूर्णता से ही बातें करती है। रावण को मारने के लिए वह श्रीराम को दोषी नहीं मानती है। वह पूरी तरह से मान लेती है कि इस स्थिति का कारण रावण की अपनी ही गलती है। इसीलिए वह और भी कहती है कि अगर रावण सीता की सुंदरता के कारण उस पर मोहित होकर उसका अपहरण किया समझना भी गलत है। क्योंकि वास्तव में रावण के पास अद्वितीय सुंदरियों की कमी नहीं

है। रावण ने बहुत सारी सुंदर स्त्रियों को अपहरण करके उन्हें पतियों से दूर करके अपने महल में, अपना बनाके रख लिया हैं। शायद उन स्त्रियों की आँसुओं का शाप लगने के कारण ही आज रावण को यह गति प्राप्त हुई है। हर किसी की मृत्यु के लिए कोई न कोई कारण छोडना विधि का धर्म है। रावण की मृत्यु का कारण सीता है। रावण ने अपने आप सीता रूपी मृत्यु को लेकर आया है। रावण सच में रामबाण से नहीं, सीता माता की पातिव्रत्य से ही मर गया है। जिस दिन उसने सीता का अपहरण किया, उसी दिन उसकी मृत्यु हो चुकी है। जो भी पाप कार्य करता है, उसे उसका फल अवश्य भोगता है। ऐसे ही पुण्य कर्म करने वालों को उसीका फल मिलता है। विभीषण सन्मार्ग पर चलकर श्रीराम की शरण में जाकर आज लंकाधिपति बन गया है और पाप के रास्ते पर चलने के कारण सर्व देवताओं को जीतकर, सुंदर स्त्रियों के साथ सुख भोगाने वाला रावण आज पृथ्वि पर रक्त सिक्त देह से गिरा हुआ है।

मंदोदरी शोकातुर होकर कहती है कि सीता सुंदरता में, जाति, वंश में मंदोदरी से अधिक नहीं है। लेकिन अज्ञान और काम-मोह में डूबा रावण यह समझ नहीं सका है। इन बातों में मंदोदरी की ईर्ष्या नहीं झलकती है। यह उसकी विवेकपूर्ण वेदना है।

मंदोदरी की सुंदरता की बात झूठ नहीं है। जब हनुमान माता सीता को ढूँढते हुए लंका में प्रवेश करता है तब वह सारी जगह ढूँढते हुए रावण के शयन कक्ष में भी जाता है। वहाँ वह रावण के बगल में सोयी मंदोदरी की अपूर्व सुंदरता, उसकी मुख छवि को देखकर पलभर

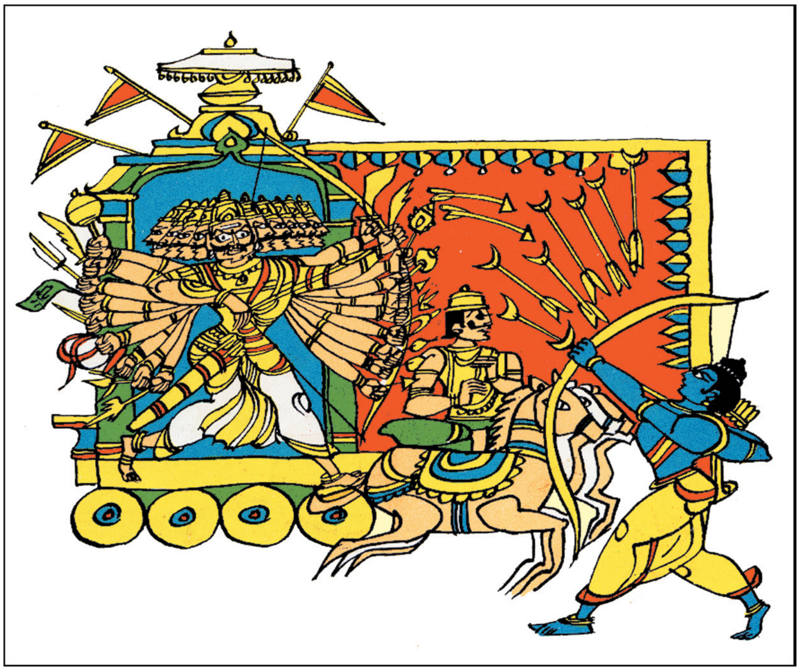

केलिए उसे सीता समझ बैठता है। सीता के दर्शन होने की खुशी भी व्यक्त करता है। बाद में विवेक जागृत होकर सीता को रावण के साथ रहना नामुमकिन जानकर लज्ज़ित होता है। लेकिन यह न कह सकनेवाला सत्य है कि हनुमान जैसा विवेकशील को भी भ्रम में डाल सकनेवाली उसकी सुंदरता को रावण अनदेखी करना उसकी दुर्भाग्य विधि है।

मंदोदरी यह भी कहती है कि कुबेर को हराकर पुष्पक विमान को पाया रावण के साथ उसने (मंदोदरी) त्रिभुवनों में गर्व से पर्यटन किया। उसे कभी भी वैधव्य के बारे में विचार ही नहीं आया था। क्योंकि रावण की वीरता पर उसे इतना विश्वास था। लेकिन आज मंदोदरी के साथ रावण की अन्य रानियाँ भी रावण की विधवाएँ बनकर रो रही हैं। वे कितनी बार बुलाने पर भी रावण बिना उत्तर दिए जमीन पर पडे रहना वे सहन नही कर पा रही हैं।

इंद्रजीत के साथ तीनों पुत्रों को खोने पर भी पति रावण को देखकर जिंदा रहनेवाली मंदोदरी को अब पति के बिना जीने को मन नहीं कर रहा है। पति के शव को देखने के बाद भी जिंदा रह पाना उसे असहनीय लग रहा है। इस तरह बहुत दुखित मंदोदरी को अन्य रानियाँ समझाकर उसे शोक मुक्त कराने की कोशिश करती हैं।

इस प्रकार मंदोदरी दानव की पत्नी होने पर भी अपने अद्‌भुत व्यक्तित्व से पतिव्रता स्त्री के रूप में रामायण में अंकित है। वह पतिपरायणा है। पति को सही मार्ग दिखाने में भी वह लेश मात्र भी संकोच नहीं करती है। पुत्रों के खोने के बाद भी वह निडर रहती है। भगवान श्रीराम को वह पहले से गौरव देती है।

अपने स्वयं संस्कारों के कारण ही वह श्रीराम को साक्षात श्री महाविष्णु के अवतार रूप में पहचानती है। कई बार अपने पति को यही वह समझाती है। सीता को सगौरव श्रीराम को लौटाने की विनति भी करती है। इस रूप में रामायण में मंदोदरी एक आदर्श, संस्कारों से परिपूर्ण, पतिव्रता स्त्री के रूप में चित्रित हुई है।

❖❖❖

(गतांक से)

मंगलाशासन आल्वार-पाशुरम्

तमिल मूल - श्री टी.के.वी.एन. सुदर्शनाचार्या

हिन्दी अनुवाद - श्री के.रामनाथन
मोबाइल - 9443322202

वान आळुम् मा मती पोल वेण्कुडैकीळ् मन्नवर् तम्
कोन् आगी वीट्रिरिन्दु कोण्डाडुम् सेलवु अरियेन्
तेन् आर् पूंचोलै तिरु वेंगट मलै मेल
कानाराय् पायुम् करुत्तु उडैयेन् आवेने।। (683)

कठिन शब्दार्थ - वान-आकाश, मती-चाँद, कुडै-छत्री, कोन-राजा, पूंचोलै-उपवन, मलै-पर्वत, कानारु-जंगली नदी, आवेने-बनूँ।

भावार्थ - लोग सोचते हैं कि धन-संपत्ति से निरंतर सुख पा सकते हैं। वे ऐसी माया में पड कर उसे पाने के लिए जीवन भर दौडते रहते हैं। यहाँ तक कि अपने स्वास्थ्य को भी खोकर माया धन के पीछे दौडते रहते हैं। लेकिन भक्त कवि कुलशेखर आळवार का विचार है कि धन-संपत्ति से मिलने वाला सुख अस्थाई है। इसलिए वे गाते हैं, ''आकाश को अपना स्थान मानकर चमकते चाँद की तरह सारे संसार को एक छत्री के अधीन करके महाराज बनकर यश प्राप्त करना और उससे मिलने वाले असीम धन को पाना मेरे लिए गौरव नहीं दे सकते। मधु से भरे सुमन के उपवनों से घेरा वेंकट गिरि पर मैं निर्बाध बहती एक जंगली नदी बनकर बहना बडा गौरव मानता हूँ।'' मतलब यह है कि भक्त कवि सोचते हैं कि गो धन, गज धन, बाजि धन आदि से मिलने वाला आदर सच्चा नहीं है। प्राप्त वह सुख किसी बलवान शत्रु द्वारा हडप लिया जा सकता है। मगर भगवान विष्णु के पर्वत वेंकट गिरि पर नदी

बनकर बहना बडा श्रेष्ठ है। इसलिए भगवान के निवास पर्वत पर एक नदी बनकर बहना धन-संपत्ति से भी बढकर है।

पिरै एरु सडैयानुम् पिरमनुम् इंदिरनुम्

मरैयाय पेरु वेळ्विक् कुरै मुडिप्पान् मरै आनान्

वेरियार् तण सोलैत् तिरुवेंगट मलै मेल्

नेरीयाय् किडक्कुम् निलै उडैयेन् आवेने। (684)

कठिन शब्दार्थ - पिरै-चाँद, सडैयान-भगवान शिव, मुरैयाय-योग्यतानुसार, वेळ्वि-यज्ञ, कुरै-कमी, मरै-वेद, सोलै-उपवन, नेरी-पथ।

भावार्थ - हम तो जानते हैं कि भगवान विष्णु वेंकट गिरि पर आकर अपने भक्तजनों की प्रार्थना स्वीकर करके उन पर कृपा बरस रहे हैं। इसलिए उस पर्वत के पथ पर भगवान के दर्शन पाने और उनकी कृपा प्राप्त करने के लिए लोगों की भीड सदा बनी रहती है। भक्त कवि कुलशेखर आळवार गाते हैं, ''चाँद को अपने भाल पर रखे भगवान शिव, इंद्र, ब्रह्म आदि अपनी योग्यता के अनुसार करते यज्ञ के फल को देकर उनकी कामनाओं की पूर्ति करने वाला, वेदों से उपासना करने वाला भगवान विष्णु के सुगंधित उपवन बने तिरुवेंकट पर्वत पर भक्तजन चढकर जाने का पथ बनकर रहने का भाग्य प्राप्त करूँ।'' मतलब यह है कि कवि भगवान विष्णु का निवास स्थान वेंकट गिरि पर पथ बनकर रहना बडा भाग्य है। क्योंकि भक्तजन बडी भक्ति से भगवान का नाम लेकर उस पर्वत के पथ पर चढकर जाते हैं। उन भक्तों के कारण पर्वत का पथ पवित्र बन गया है। पर्वत के उस पथ को ऐसे भक्तजनों की पांव धूलि से भगवान की दया प्राप्त होगी। इसलिए वे उस पवित्र पर्वत पर पथ बने रहना बडा गौरव मानते हैं।

सेडीयाय वल्विनैकळ् तीर्कुम् तिरुमाले

नेडियाने वेंगडवा निन् कोयिलिन् वासल्

अडियारुम् वानवरुम् अरम्बैयरुम् किडन्दु इयंगुम्

पडियाय् किडन्दु उन् पवळवाय् काण्बेने। (685)

कठिन शब्दार्थ - सेडी-पौधे, विनै-बुराई, कोयिल्-मन्दिर, वासल-द्वार, अडियार्-भक्त, वानवर्-देवगण, अरम्बैयर्-देव कन्या, पडि-सीढी, पवळवाय-मूंगा सा लाल होंठ।

भावार्थ - यह तो सच है कि भगवान विष्णु के रूप सौंदर्य के दर्शन से मिलते सुख की कोई सीमा नहीं है। उनके दर्शन से भक्तजन एकदम आत्मविभोर हो जाते हैं और अपने को पूर्ण रूप से भक्ति सागर में लिप्त कर देते हैं। इसलिए भगवान विष्णु के दर्शन के लिए भक्तजन बडी संख्या में तिरुवेंकटगिर पर आते रहते हैं और अपने को भक्ति सागर में लिप्त कर महान आनंद का अनुभव कर लेते हैं। इसलिए भक्त कवि कुलशेखर आळवार गाते हैं, ''हे भगवान विष्णु, तुम तो घने पौधों बराबर होने वाली बुराइयों को हटाने वाले हो। तुम महान हो। तिरुवेंकट पर्वत पर रहते हो। भक्तजन, देव गण, देव कन्यायें आदि बडी संख्या में तुम्हारे पवित्र मन्दिर के द्वार की सीढी पर चढकर आते हैं और तुम्हारे दिव्य दर्शन पाते हैं। मेरी इच्छा है कि उस द्वार की सीढी बनकर तुम्हारे मूँगा जैसे लाल होंठ का दर्शन सदा करता रहूँ।''

मतलब यह है कि भक्त कवि की इच्छा है कि उनको भगवान का दिव्य दर्शन सदा मिलते रहे। वे सोचते हैं कि अन्य भक्त भगवान के मन्दिर में आते हैं और उनके दर्शन पाकर चले जाते हैं। परंतु वे ऐसा जाने को तैयार नहीं है। वे सोचते हैं कि यदि भगवान के सामने होने वाली सीढी बन जाए तो भगवान के दिव्य दर्शन को सदा प्राप्त कर सकते हैं। उल्लेखनीय बात यह है कि कुलशेखर आळवार की इच्छा को भगवान ने स्वीकार कर लिया। इसलिए आज भी विष्णु मन्दिर में भगवान की मूर्ति के सामने होने वाली सीढी को कुलशेखर सीढी कहते हैं।

क्रमशः

महर्षि विश्वामित्र

- डॉ.जी.सुजाता,
मोबाइल - 9494064112.

भारतवर्ष में ऋषियों और संतों की सुदीर्घ महान परम्परा है। उनके तप, ज्ञान और कर्म के बल पर ही सनातन भारतीय संस्कृति की धारा सतत प्रवाहमान है। भारतीय ऋषि परम्परा में ऋषि, महर्षि, देवर्षि, ब्रह्मर्षि तो अनेक हैं, लेकिन अपने परम तेजस्वी व्यक्तित्व और कृतित्व के साथ विश्वामित्र तीन युगों की त्रिवेणी के प्रत्येक तट पर उपस्थित हैं। महर्षि विश्वामित्र इतिहास के सबसे श्रेष्ठ ऋषियों में से एक है जो कि जन्म से एक ब्राह्मण नहीं थे। लेकिन अपने तप और ज्ञान के कारण इन्हें महर्षि की उपाधि मिली। विश्वामित्र को सप्तर्षियों में अन्यतम स्थान प्राप्त हुआ था। ऋग्वेद के तृतीय मंडल में 30वें, 33वें तथा 53वें सूक्त में महर्षि विश्वामित्र का वर्णन मिलता है। ऋग्वेद के अनेक मंत्र ऐसे हैं जिनके द्रष्टा विश्वामित्र अथवा उनके वंशज माने जाते हैं। ऋग्वेद के तीसरे मंडल के 62वें सूक्त का दसवाँ मंत्र इन्हीं महान विश्वामित्र द्वारा सृजित है जो लोक में गायत्री मंत्र के नाम से प्रसिद्ध और सर्वफलदायक है। ऋग्वेद के सभी दस मंडलों में विश्वामित्र के सूक्त और मंत्र हैं, जबकि तीसरा मंडल तो समूचा ही विश्वामित्र और उनकी कुल व शिष्य परम्परा कृत है।

विश्वामित्र का परिचय :

कुशिक वंशीय राजा थे प्रजापति तथा उनके पुत्र कुश, कुश के पुत्र कुशनाभ और इन्ही कुशनाभ के पुत्र थे गाधि, और महान तेजस्वी राजा गाधि के पुत्र हुए विश्वामित्र जो सौ पुत्रों के पिता और एक पराक्रमी शक्तिशाली राजा थे। इनका विश्वामित्र नाम ब्राह्मणत्व प्राप्त करने पर पड़ा था। इनका पहला क्षत्रिय दशा का नाम 'विश्वरथ' था। कुश वंश में जन्म लेने के कारण इन्हे कौशिक भी कहते हैं। अतः विश्वामित्र जन्म से ब्राह्मण नहीं थे वे क्षत्रिय राजा थे। पुराणों में लिखा है कि राजा गाधि को सत्यवती नाम की एक सुंदरी कन्या उत्पन्न हुई थी। वह कन्या उन्होंने ऋचीक ऋषि को दी थी। ऋचीक ने एक बार दो अलग-अलग चरु (यज्ञ की आहुति हेतु पकाया गया अन्न) तैयार करके अपनी स्त्री सत्यवती को दिए थे और कहा था कि इसमें से यह एक चरु तो तुम खा लेना जिसमें तुम्हें ब्राह्मणों के गुण से संपन्न एक पुत्र होगा। और एक दूसरा चरु अपनी माता को दे देना जिससे उन्हें क्षत्रियों के गुणवाला एक बहुत तेजस्वी पुत्र उत्पन्न होगा। इसी बीच में राजा गाधि अपनी स्त्री सहित वहाँ आए। सत्यवती ने वे दोनों चरु अपनी माता के सामने रख दिए और उनका गुण बदला दिया। माता ने समझा कि ऋचीक ने अपनी स्त्री के लिये बढ़िया चरु तैयार किया होगा। इसलिये उसने उसका चरु तो अपने आप खा लिया और अपना उसे खिला दिया। इससे उसके गर्भ से तो विश्वामित्र का जन्म हुआ, जिसमें क्षत्रिय होने पर भी ब्राह्मणों के से गुण थे और सत्यवती के गर्भ से जमदग्नि का जन्म हुआ जो ब्राह्मण होने पर भी क्षत्रियों के गुणों से संपन्न थे।

विश्वामित्र और ऋषि वशिष्ठ :

पौराणिक धर्म ग्रंथों और हिन्दू धार्मिक मान्यताओं के अनुसार यह

माना जाता है कि विश्वामित्र ने कई वर्ष तक सफलतापूर्वक राज्य किया था। विश्वामित्र अपने समय के वीर और ख्यातिप्राप्त राजाओं में गिने जाते थे। वह बडे ही प्रजापालक तथा धर्मात्मा राजा थे। एक बार वे अपनी विशाल सेना के साथ जंगल में निकल गये थे और रास्ते में पडने वाले महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में उनसे मिले। महर्षि वशिष्ठ ने उनका और उनकी सेना का सत्कार किया और उनकी विशाल सेना को भर पेट भोजन भी कराया। राजा कौशिक को इस पर आश्चर्य हुआ तो उन्होंने गुरु वशिष्ठ से प्रश्न किया- हे गुरुवर! मैं यह जानने की उत्सुक हूँ कि कैसे आपने मेरी विशाल सेना के लिए इतने प्रकार के स्वादिष्ट भोजन का प्रबंध किया। वशिष्ठ ने बताया कि मेरे पास नंदिनी गाय है जो कामधेनु की पुत्री है और स्वयं इंद्र ने महर्षि को भेंट की थी। यह देख राजा विश्वामित्र का मन कामधेनु पर आ गया और उन्होंने वशिष्ठ से वह गाय मांगी। वशिष्ठ के मना करने पर वे जिद पर अड़ गए और बलपूर्वक गाय को साथ ले जाने लगे। लेकिन नंदिनी एक साधारण गाय नहीं थी वह अपने पालक गुरु वशिष्ठ से आज्ञा लेकर अपनी योग माया की शक्ति से राजा की विशाल सेना को ध्वस्त कर देती है और राजा को बंदी बनाकर वशिष्ठ के सामने लाकर खड़ा कर देती है।

विश्वामित्र अपनी सेना के नाश से क्रोधित हो गुरु वशिष्ठ पर आक्रमण करते हैं। गुरु वशिष्ठ क्रोधित हो जाते हैं और राजा के एक पुत्र को छोड़ सभी को शाप देकर भस्म कर देते हैं। तब विश्वामित्र को आभास हुआ कि क्षात्र बल से ब्रह्म बल श्रेष्ठ है। अपने पुत्र के इस अंत से दुखी कौशिक अपना राज पाठ अपने एक पुत्र को सौंप कर तपस्या के लिये हिमालय चले जाते हैं और हिमालय में कठिन तपस्या से वे भगवान शिव को प्रसन्न करते हैं। भगवान शिव प्रकट होकर राजा को वरदान मांगने को कहते हैं। तब राजा कौशिक शिव जी से सभी दिव्यास्त्र का ज्ञान मांगते हैं। शिव जी उन्हें सभी शस्त्रों से सुशोभित करते हैं। धनुर्विद्या का पूर्ण ज्ञान होने के बाद राजा कौशिक पुनः अपने पुत्रों की मृत्यु का बदला लेने के लिये वशिष्ठ पर आक्रमण करते हैं और दोनों तरफ से घमासान युद्ध शुरू हो जाता हैं। राजा के छोड़े हर एक शस्त्र को वशिष्ठ निष्फल कर देते हैं। अंतः वे क्रोधित होकर कौशिक पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करते हैं जिससे चारों तरफ तीव्र ज्वाला उठने लगती हैं तब सभी देवता वशिष्ठ जी से अनुरोध करते हैं कि वे अपना ब्रह्मास्त्र वापस ग्रहण कर ले। वे कौशिक से जीत चुके हैं इसलिए वे पृथ्वी की इस ब्रह्मास्त्र से रक्षा करें। सभी के अनुरोध और रक्षा के लिए वशिष्ठ शांत हो जाते हैं और ब्रह्मास्त्र को वापस ले लेते हैं।

विश्वामित्र ने पुनः तपस्या की और ब्रह्म ने उन्हें राजर्षी पद प्रदान किया। परन्तु वे संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने पुनः तपस्या प्रारम्भ की और बहुत सारे विघ्नों के बाद भी तपस्या को पूर्ण किया और इन्द्र ने उन्हें ब्राह्मण पद प्रदान किया। किन्तु विश्वामित्र जी ने ब्रह्माजी से कहा- हे ब्रह्मदेव! मैं अपने आपको ब्राह्मण तभी समझूँगा जब मुनि वशिष्ठ मुझे ब्राह्मण और महर्षि समझेंगे। सभी देवता वशिष्ठ जी के पास पहुँचे और उन्हें सारी कहानी सुना कर उनसे आग्रह किया कि वे विश्वामित्र से जाकर मिले और उनकी इच्छा पूर्ण करें। तब स्वयं महर्षि वशिष्ठ तथा तीनों लोकों ने विश्वामित्र को ब्राह्मण स्वीकार किया।

विश्वामित्र और त्रिशंकु :

उन दिनों श्रीराम के पूर्वज इक्ष्वाकु कुल के राजा त्रिशंकु राज करते थे। वशिष्ठ उनके कुलगुरु थे। त्रिशंकु की कामना थी वे सशरीर स्वर्ग जाएं, जो कि प्रकृति के

नियमों के अनुरूप नहीं था। उन्होंने महर्षि वशिष्ठ से इसके लिए अनुरोध किया। लेकिन वशिष्ठ के मना करने पर वे उनको भला-बुरा कहने लगे। वशिष्ठ के पुत्रों ने क्रोधित होकर त्रिशंकु को चांडाल हो जाने का शाप दे दिया। तब त्रिशंकु विश्वामित्र के पास गए। विश्वामित्र ने त्रिशंकु का आग्रह स्वीकार कर लिया और एक यज्ञ का संधान किया। उनके निमंत्रण को ऋषि-मुनियों ने तो स्वीकार कर लिया परन्तु वशिष्ठ और उनके पुत्रों ने स्वीकार नहीं किया। उनका कहना था कि जिस यज्ञ में यजमान चाण्डाल हो और पुरोहित क्षत्रिय हो उस यज्ञ का भाग वे स्वीकार नहीं करेंगे। उनके ऐसे वचनों को सुन कर विश्वामित्र ने उन्हें शाप दे दिया और वशिष्ठ के पुत्रों की मृत्यु हो गयी। यह सब देखकर अन्य सभी भयभीत हो गये और यज्ञ का हिस्सा बन गये। यज्ञ पूरा किया गया जिसके बाद देवताओं का आह्वान किया गया। लेकिन देवता नहीं आये तब विश्वामित्र ने क्रोधित होकर अपने तप के बल पर त्रिशंकु को शरीर के साथ स्वर्ग लोक भेजा। मगर गुरु से शापित त्रिशंकु को देवराज इंद्र ने स्वर्ग में प्रवेश करने न दिया। इन्द्र के ऐसा कहते ही त्रिशंकु सिर के बल पृथ्वी पर गिरने लगे और विश्वामित्र से अपनी रक्षा की प्रार्थना करने लगे। विश्वामित्र ने उन्हें वहीं ठहरने का आदेश दिया और वे उधर ही सिर के बल लटक गए। तब विश्वामित्र ने उसी स्थान पर अपनी तपस्या के बल से स्वर्ग की सृष्टि कर दी और नए तारे तथा दक्षिण दिशा में सप्तर्षि मंडल बना दिए। इसके बाद उन्होंने नए इन्द्र की सृष्टि करने का विचार किया। देवता भयभीत होकर विश्वामित्र से प्रार्थना की और सदेह त्रिशंकु के स्वर्ग जाने को प्रकृति के नियम के विपरीत बताया। इस पर विश्वामित्र शांत तो हुए मगर शर्त रखी कि त्रिशंकु को सदा स्वर्ग का सुख मिले, क्योंकि मैंने अपना वचन पूरा करने के लिए यह सब किया है। अब से त्रिशंकु इसी नक्षत्र में रहेगा और देवताओं की सत्ता को कोई हानि नहीं होगी। इससे संतुष्ट होकर इन्द्रादि देवता अपने-अपने स्थानों को वापस चले गए।

विश्वामित्र और मेनका की कहानी :

एक बार महर्षि विश्वामित्र वन में कठोर तपस्या में लीन थे, बाहरी दुनियाँ को उन्हें कुछ आभास भी नहीं था, जिसके परिणामस्वरूप देवराज इंद्र का सिंहासन हिलने लगा और इंद्र को अपने इन्द्रासन खोने का डर सताने लगा। इसलिए इन्द्र ने अप्सरा मेनका को धरती पर जाकर महर्षि विश्वामित्र की तपस्या को भंग करने के लिए भेजा। उस समय तक महर्षि विश्वामित्र ने काम को पूरी तरह वश में कर लिया था। इसलिए मेनका के रूप और सौन्दर्य का उनपर कोई असर नहीं पड़ा।

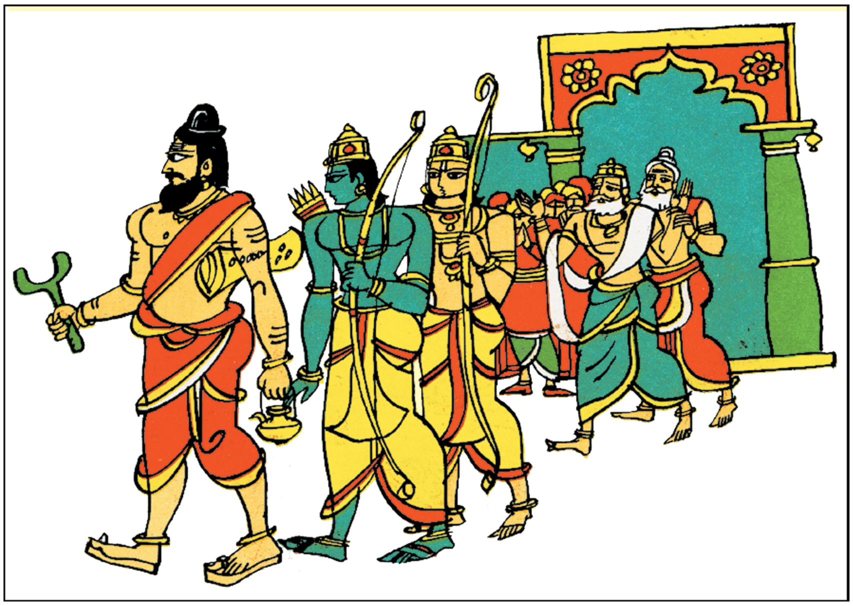

किन्तु कामदेव की मदद से मेनका तपस्या भंग करने में सफल हो गयी। विश्वामित्र मेनका पर मोहित हो गये थे और उन्होंने मेनका के साथ सहवास किया। मेनका से विश्वामित्र को एक सुन्दर कन्या प्राप्त हुई जिसका नाम शकुंतला रखा गया। एक दिन मेनका इन्द्र का आदेश मानकर न चाहते हुए महर्षि तथा पुत्री शकुंतला को छोड़कर देवलोक चली गयी। विश्वामित्र ने इस कन्या को रात के अंधेरे में ऋषि कण्व के आश्रम में छोड़ दिया था। यह कन्या शकुन्तला के नाम से विख्यात हुई, जिसका गंधर्व विवाह सम्राट दुष्यन्त के साथ हुआ। इन दोनों से भरत नाम के पुत्र ने जन्म लिया, जिसके नाम पर हमारे देश का नाम 'भारत' पड़ा

ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लेने के बाद महर्षि विश्वामित्र ने अस्त्र-शस्त्र का त्याग कर दिया। तथा वन प्रदेश में अपने शिष्यों के साथ रहने लगे। राक्षस महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ स्थल पर पहुँच कर यज्ञ भंग कर ऋषि-मुनियों को मारकर खा जाते थे। वे स्वयं युद्ध नहीं कर सकते थे। इसलिए महाराजा दशरथ के पास गए तथा उनसे अनुरोध करके उनके पुत्र राम और लक्ष्मण को लेकर वन पहुँचे, जहाँ पर राम ने ताड़का और सुबाहु जैसे राक्षसों का वध कर उन्हें यमलोक भेज दिया। इसके पश्चात विश्वामित्र, राम-लक्ष्मण को लेकर

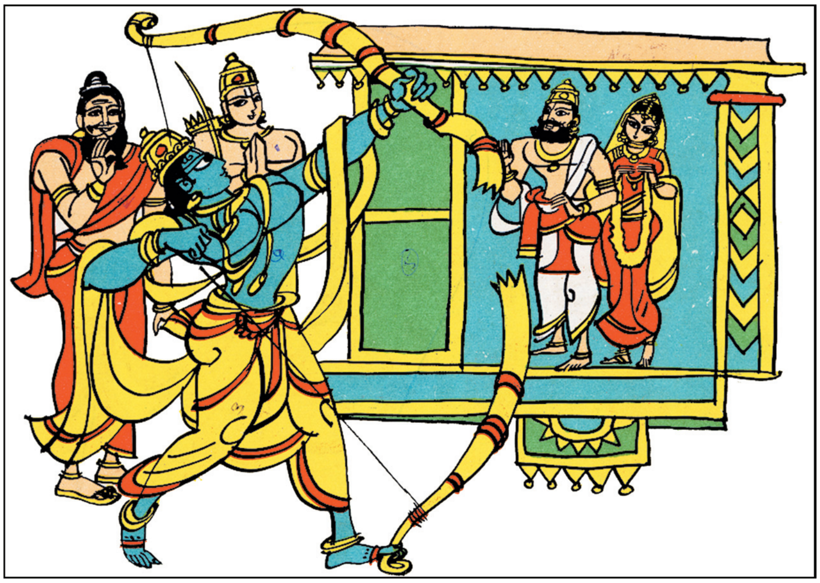

जनकपुरी पहुँचे जहाँ सीता स्वयंवर का आयोजन हो रहा था। गुरूजी विश्वामित्र की आज्ञा से भगवान श्रीराम ने शिव धनुष का भंग कर दिया और राम-सीता के विवाह के साथ महाराज दशरथ के तीनों पुत्र लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न का भी विवाह हुआ।

विश्वामित्र की तपोस्थली :

वैसे तो उनकी तपोस्थली और भी जगह है लेकिन माना जाता है कि हरिद्वार में आज जहाँ शांतिकुंज है, उसी स्थान पर विश्वामित्र ने घोर तपस्या करके इंद्र से रुष्ट होकर एक अलग ही स्वर्गलोक की रचना कर दी थी। रामायण काल में राम और लक्ष्मण के गुरु महर्षि विश्वामित्र का आश्रम बक्सर (बिहार) में स्थित था। इस स्थान को गंगा-सरयू संगम के निकट बताया गया है। विश्वामित्र के आश्रम को 'सिद्धाश्रम' भी कहा जाता है।

सप्तऋषियों में सर्वोपरि विश्वामित्र ने अपनी संकल्प शक्ति और साधना के बल पर एक राजा से ब्रह्मर्षि के महान पद को प्राप्त किया। यह उपलब्धि हर युग में हर पीढ़ी को इस बात की प्रेरणा देती है कि मनुष्य की क्षमताएँ असीम हैं। यदि वह ठान ले तो विश्वामित्र की तरह न केवल नया स्वर्ग रच सकता है, बल्कि मनुष्य होकर देवताओं का पूज्य भी बन सकता है।

(गतांक से)

श्री प्रपन्नामृतम्

(२९वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - 9900926773

श्री रामानुजाचार्य की वेंकटाचल यात्रा

उधर यतिराज श्रीरामानुजाचार्य का आगमन सुनकर समृद्धिशाली यज्ञेश पूजन की सभी सामग्रियों को लेकर उनकी पूजा के लिए सपरिवार आगे आये, किन्तु श्रीरामानुजाचार्य को आते नहीं देखकर चिन्ताकुल हो उनका पता लगाने के लिए अपने आदमियों को भेजा। लौटे हुए अपने आदमियों से यह जानकर कि श्रीयतिराज उनके यहाँ नहीं आयेंगे वह बडे ही दुखी हुए और शीघ्र ही उनके सन्निकट में जाकर, पैरों पर गिरकर रोने लगे। व्याकुल यज्ञेश को देखकर श्रीरामानुजाचार्य उन्हें उठाते हुए कृपापूर्वक बोले-पंचसंस्कार सम्पत्ति, भगवान की पूजा और अर्थपंचक-विज्ञान गुरु की कृपा से ही प्राप्त होते है किन्तु आत्मोज्ञीवन के लिये श्रीवैष्णव अतिथियों का पूजन आवश्यक है। थके मांदे वैष्णवों को देखकर जिसने हर्षपूर्वक उनको पंखा नही झला, रास्ते के श्रम को दूर करने के लिये उनकी पाद्य-अर्घ्य इत्यादि उपकरणों से पूजा नहीं की, सुन्दर मनोहर वाक्यों से उनका सन्तुष्ट नहीं किया, मनोहर, पवित्र आसन पर बैठाकर उनको भोजन नहीं कराया, पुष्प, चन्दन इत्यादि से यथाशक्ति उनको सन्तुष्ट नहीं किया तथा उनके भोजन करने के बाद स्वयं उनका प्रसाद नहीं ग्रहण किया तो फिर उसको वैष्णव कभी नहीं समझना चाहिये। किन्तु यज्ञेश! तुम तो दम्भ के लिये धर्म करते हो, तुममें यह सब गुण नहीं होने के कारण हम तुम्हारे यहाँ नहीं रह सकते। हम वैष्णववृन्द तो सात्विक अन्न को ही भगवान का भोग लगाकर ग्रहण करते हैं। श्रीरामानुजाचार्य की उपर्युक्त बातों को सुनकर यज्ञेश अत्यन्त ही लज्जित हुआ और हाथ जोडकर बोला-भगवन! आप मेरे सभी अपराधों को क्षमा करेंगे। आपके आगमन को सुनकर ही औत्सुक्याधिक्य के कारण मुझसे यह भूल हुई। अतः मेरी रक्षा आप ही कर सकते हैं। उनकी बातों को सुनकर श्रीरामानुजाचार्य बोले कि तुम अब से भी वैष्णव अतिथियों का सत्कार किया करो, जो कुछ भी बन पड़े श्रीवैष्णवों का आतिथ्य किया करो, यही तुम्हारी पूजा और सेवा है। यज्ञेश को यह आदेश देकर श्रीरामानुजाचार्य उस सहस्र नामक ग्राम से सत्यवती क्षेत्र में चले आए। वहाँ आकर उन्होंने कांचीपूर्ण स्वामी के साथ भगवान वरदराज की वन्दना करके वहाँ तीन दिन तक निवास किया, तदनन्तर श्रीवेंकटेश प्रभु के दर्शन के लिए प्रस्थान किये। वेंकटाद्रि के नीचे के दक्षिण तरफ कपिल नामक तीर्थ में शठकोपादि दस सूरियों ने निवास किया था, उसी तीर्थ में स्नान करके यतिराज तत्दृश्यों का दर्शन कर वृषाचल का वैभव देखकर आश्चर्य चकित हो गये। तथा वहीं उन्होंने कुछ दिनों तक निवास किया। उस देश का राजा विट्ठलदेव श्रीभाष्यकार के अप्रमेय वैभव को सुनकर विस्मित हुआ और उनकी सेवा के लिये आया। यतिराज ने भी प्रभावित एवं भक्त विट्ठलदेव को पंचसंस्कार संस्कृत करके उसकी रक्षा की। दक्षिण में विट्ठलदेव ने नीलमण्डीय नामक तीस क्षेत्रों वाला प्रदेश यतिश्रेष्ठ को प्रदान किया, जिसे उन्होंने स्वाश्रित तीस ब्राह्मणों को दे दिया। तदनन्तर जगद्गुरु श्रीरामानुजाचार्य के अभिप्राय को जानकर अनन्ताचार्य इत्यादि वैष्णवों ने उनके सन्निकट जाकर शेषशैय्या निवास रसिक भगवान वेंकटेश का मंगलाशासन करने के लिए प्रार्थना की तथा भगवान वेंकटेश के कमनीय दिव्य विग्रह के दर्शन करने के लिए भी प्रार्थना की।

।।श्री प्रपन्नामृत का २९वाँ अध्याय समाप्त हुआ।।

क्रमशः

तिरुपति
श्री गोविंदराजस्वामीजी का
प्लवोत्सव
दि. 10-02-2022
से
दि. 16-02-2022
तक

द्वादशादित्य स्तोत्र

चैत्र - धाता

धाता शुभस्य में दाता
भूयो भूयोऽपि भूयसः।

वैशाख - अर्यमा

अर्यमा तु सदा भूत्यै
भूयस्यै प्रणतस्य मे।

ज्येष्ठ - मित्र

मित्रोऽस्तु मम मोदाय
तमस्तोमविनाशनः।

अश्विन - त्वष्टा

त्वष्टा शुभाय मे भूयात्
शिष्टावलिनिषेवितः।

कार्तिक - विष्णु

गायत्रीप्रतिपाद्यं तं
विष्णुं भक्त्या नमाम्यहम्।

मार्गशीर्ष - अंशुमान्

मुनीन्द्रनिवहस्तुत्यो
भूतिदोंऽशुर्भवेन्मम।

द्वादशादित्य स्तोत्र

आषाढ़ - वरुण

वरुणो धवलो जिष्णुः
पुरुषो निम्नगाधिपः।

श्रावण - इन्द्र

सहस्त्ररश्मिसंवीतं
इन्द्रं वरदमाश्रये।

भाद्रपद - विवस्वंत

नभोग्रहमहादीपं
विवस्वन्तं नमाम्यहम्।

पौष - भग

घटिकानां च यः कर्ता
भगो भाग्यप्रदोऽस्तु मे।

माघ - पूष

पूषा तोषाय मे भूयात्
सर्वपापापनोदनात्।

फाल्गुन - पर्जन्य

जगदानन्दजनकः
पर्जन्यः पूज्यते मया।

दि. 02-12-2021 को तिरुमल वसंतमंडप में श्री धन्वंतरी पूजा शास्त्रोक्त रूप में संपन्न किया गया है।

दि. 15-12-2021 से दि. 19-12-2021 तक तिरुपति श्री कपिलेश्वरस्वामीजी के मंदिर में एकांत रूप में संपन्न प्लवोत्सव के दृश्य।

दि. 11-12-2021 को अलिपिरि स्थित श्री वेंकटेश्वर सप्त-गो प्रदक्षिण मंदिर को कंचिकामकोटि पीठाधिपति श्रीश्रीश्री शंकर विजयेंद्र सरस्वती स्वामीजी ने संदर्शन करके गोपूजा किया। इस संदर्भ में ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी, ति.ति.दे. अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डी, आई.डी.ई.एस., ति.ति.दे. न्यास-मंडली के सदस्य और आदि अन्य अधिकारीगण ने भाग लिया।

तिरुपति स्थित श्री पद्मावती चिल्ड्रेन पिडियाट्रिक कार्डिक आस्पताल में कैथ लैब का दि. 16-12-2021 को ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी ने उद्घाटन किया था। इस संदर्भ में ति.ति.दे. (तिरुपति) जे.ई.ओ. श्री वी.वीरब्रह्मम, आई.ए.एस., और अन्य उन्नताधिकारीगण ने भाग लिया।

दि. 31-12-2021 को 6 पुष्ठों का 3डी एफेक्ट ति.ति.दे. नूतन वर्ष 2022 की स्वामीजी और देवी माँ का विशेष कैलंडर को विमोचन करते हुए ति.ति.दे. अध्यक्ष और ई.ओ.। इस संदर्भ में ति.ति.दे. अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी, तिरुपति जे.ई.ओ. आदि अन्य उन्नताधिकारीगण ने भाग लिया।

युवा

धर्म के सही मार्गदर्शन से युवाओं का अद्‌भुत विकास

- श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालीया, मोबाइल - 9825113636

भारतीय नवयुवकों के सफल और महत्वपूर्ण जीवन के मार्गदर्शन के लिए इस लेख का निर्माण किया गया है। इस में राजा हरिश्चंद्र के पुत्र रोहित की कथा के माध्यम से नवयुवकों को मार्गदर्शन किया गया है। विशेष कर नवयुवकों को अपनी सफलता के लिए सतत कार्यरत रहना चाहिए। किसी भी प्रकार का आलसीपन, कार्य से विमुख होना, कार्य को स्थगित करने की मानसिकता आदि उन की सफलता को प्रभावित करती है। सत्य हरिश्चंद्र के पुत्र रोहित के जीवन से और उन के द्वारा किए गए सतत प्रयत्न के द्वारा इस लेख में नवयुवकों को आलसीपन को त्यागने की तथा सतत प्रयत्नशील रहने की शिक्षा दी गयी है।

राजा हरिश्चंद्र को वरुण देवता से वरदान में मिले उनके पुत्र रोहित की कथा का आरंभिक अंश यहाँ प्रस्तुत किया गया है। संतानहीन सत्य हरिश्चंद्र ने संतान के लिए वरुण देवता का यज्ञ किया था। संतान के बदले में वरुण ने हरिश्चंद्र से पुत्र को त्याग के रूप में मांगा था। समझौते अनुसर रोहित के जन्म के बाद कई बार हरिश्चंद्र ने बहाना बना कर रोहित को वरुण को समर्पित नहीं किया। रोहित पलकर बडा हो गया। पिता की वचनबद्धता को जानते हुए रोहित वन को चला गया। वर्षोपरांत उसने घर लौटना चाहा तो मार्ग में ब्राह्मण भेषधारी इंद्र उसे मिल गये। ब्राह्मण के विचारों से प्रेरित होकर फिर रोहित वापस पर्यटन पर चला गया। दूसरे वर्ष के समाप्त होते-होते जब वह घर लौटने लगा तो ब्राह्मण रूप में इंद्र उसे फिर मिल गए। ब्राह्मण ने उसे पुनः ''चरैवेति'' का उपदेश देते हुए पर्यटन करते रहने की सलाह दी -

पुष्पिण्यौ चरतो जङ्घे भूष्णुरात्मा फलग्रहिः।

शेरेऽस्य सर्वे पाप्मानः श्रमेण प्रपथे हताश्चरैवेति॥

(ऐतरेय ब्राह्मण, अध्याय ३, खण्ड ३)

(चरतः जङ्घे पुष्पिण्यौ, भूष्णुः आत्मा फलग्रहिः, अस्य श्रमेण प्रपथे हतः सर्वे पाप्मानः शेरे, चर एव इति॥)

अर्थ - निरंतर चलने वाले की जंघाएँ पुष्पित होती हैं, अर्थात उस वृक्ष की शाखाओं-उपशाखाओं की भांति होती है जिन पर सुगंधित एवं फलीभूत होने वाले फूल लगते हैं, और जिसका शरीर बढते हुए वृक्ष की भांति फलों से पूरित होता है, अर्थात वह भी फलग्रहण करता है। प्रकृष्ट मार्गों पर श्रम के साथ चलते हुए उसके समस्त पाप नष्ट होकर सो जाते हैं, अर्थात निष्प्रभावी हो जाते हैं। अतः तुम चलते ही रहो (विचरण ही करते रहो, चर एव)।

इस श्लोक की व्याख्या मुझे सरल नहीं लगी। सायण भाष्य के अनुसार विचरणशील व्यक्ति की जांघों के श्रम के फलस्वरूप मनुष्य को विभिन्न स्थानों पर भांति-भांति के भोज्य पदार्थ प्राप्त होते हैं जिनसे उसका शरीर वृद्धि एवं आरोग्य पाता है। प्रकृष्ट मार्ग के अर्थ श्रेष्ठ स्थानों यथा तीर्थस्थल, मंदिर, महात्माओं-ज्ञानियों के आश्रम-आवास से लिया गया है। इन स्थानों पर प्रवास या उनके दर्शन से उसे पुण्यलाभ होता है अर्थात

उसके पाप क्षीण होकर पाप भाव हो जाते हैं। राजपुत्र रोहित ने ब्राह्मण की बातों को मान लिया और वह घर लौटने का विचार त्यागकर पुनः देशाटन पर निकल गया। घूमते-फिरते तीसरा वर्ष बीतने को हुआ तो उसने वापस घर लौटने का मन बनाया। इस बार भी इन्द्र देव ब्राह्मण वेश में उसे मार्ग में दर्शन देते है। वे उसे पुनः ''चरैवेति'' का उपदेश देते हैं। वे कहते हैं -

आस्ते भग आसीनस्योर्ध्वस्तिष्ठति तिष्ठतः।।

शेते निपद्यमानस्य चराति चरतो भगश्चरैवेति।।

(ऐतरेय ब्राह्मण, अध्याय 3, खण्ड 3)

(आसीनस्य भग आस्ते, तिष्ठतः ऊर्ध्वः तिष्ठति, निपद्यमानस्य शेते, चरतः भगः चराति, चर एव इति।।)

अर्थ - जो मनुष्य बैठा रहता है, उसका सौभाग्य (भग) भी रुका रहता है। जो उठ खडा होता है उसका सौभाग्य भी उसी प्रकार उठता है। जो पड़ा या लेटा रहता है उसका सौभाग्य भी सो जाता है। और जो विचरण में लगता है उसका सौभाग्य भी चलने लगता है। इसलिए तुम विचरण ही करते रहो (चर एव)।

सौभाग्य से तात्पर्य धन-संपदा, सुख-समृद्धि से है। जो व्यक्ति निष्क्रिय बैठा रहता है, जो उद्यमशील नहीं होता, उसका ऐश्वर्य बढ नहीं पाता है। जो उद्यम हेतु उठ खडा होता है उसका सौभाग्य भी आगे बढ़ने के लिए उद्युत होता है। जो आलसी होता है, सोया रहता है, निश्चिंत पडा रहता है, उसका ऐश्वर्य नष्ट होने लगता है, उसकी समुचित देखभाल नहीं हो पाती। उसके विपरीत जो कर्मठ होता है, उद्यम में लगा रहता है, जो ऐश्वर्य-वृद्धि हेतु विभिन्न कार्यों को संपन्न करने के लिए भ्रमण करता है, यहाँ-वहाँ जाता है उसके सौभाग्य की भी वृद्धि होती है, धन-धान्य, संपदा आगे बढ़ते हैं।

पर्यटन में लगे रोहित का एक और वर्ष बीत गया और वह घर लौटने लगा। पिछली बारों की तरह इस बार भी उसे मार्ग में ब्राह्मण-रूपी इंद्र मिल गए, जिन्होंने उसे ''चरैवेति'' कहते हुए पुनः भ्रमण करते रहने की सलाह दी। रोहित उनके वचनों का सम्मान करते हुए फिर से पर्यटन में निकल गया।

इस प्रकार रोहित चार वर्षों तक यत्र-तत्र भ्रमण करता रहा। चौथे वर्ष के अंत पर जब वह घर लौटने को उद्युत हुआ तो मार्ग में उसे ब्राह्मण भेष में इंद्रदेव पुनः मिल गए। उन्होंने हर बार की तरह ''चरैवेति'' का उपदेश दिया और कहा -

कलिः शयानो भवति संजिहानस्तु द्वापरः।

उत्तिष्ठंस्त्रेता भवति कृतं संपाद्यते चरंश्चरैवेति।।

(ऐतरेय ब्राह्मण, अध्याय 3, खण्ड 3)

(शयानः कलिः भवति, संजिहानः तु द्वापरः, उत्तिष्ठः त्रेता भवति, चरन् कृतं संपाद्यते, चर एव इति।)

अर्थ - शयन की अवस्था कलियुग के समान है, जगकर सचेत होना द्वापर के समान है, उठ खडा होना त्रेता सदृश है और उद्यम में संलग्न एवं चलनशील होना कृतयुग (सत्ययुग) के समान है। अतः तुम चलते ही रहो (चर एव)।

इस श्लोक में मनुष्य की चार अवस्थाओं की तुलना चार युगों से क्रमशः की गई है। ये अवस्थाएँ हैं (1) मनुष्य के निद्रामग्न एवं निष्क्रिय होने की अवस्था, (2) जागृति किंतु आलस्य में पड़े रहने की अवस्था, (3) आलस्य त्याग उठ खड़ा होकर कार्य के लिए उद्युत होने की अवस्था और (4) कार्य-संपादन में लगते हुए चलायमान होना।

क्रमशः

गतांक से

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - 9403727927

वाळ्वत्तदु तोल्लै वादियर्क्कु, एन्नुम् मरैयवर् तम्
ताळ्वत्तदु तवम् धारणि पेत्तदु, तत्तुवनूल्
कूळत्तदु कुत्तमेल्लाम् पदित्त कुणत्तिनर्क्कु अन्
नाळत्तदु, नम्मिरामानुजन् तन्द ज्ञानत्तिले ॥६५॥

अस्मदाचार्यवर्यभगवद्रामानुजानुगृहीतैस्सदुपदेशैः चिरन्तनदुर्वा - दिवर्गजीवितं हतम्। वैदिकानां क्षतिर्व्यपगता। पृथिवी च समजनि भाग्याधिका। तत्त्वपरशास्त्राणि संदेहविपर्यय विधुरार्थ प्रकाशनप्रवीणान्यभूवन्। उच्चावचावद्य मयस्वभावभाजां जनानां च हतावद्यता समजनि॥

हमारे श्री रामानुज स्वामीजी से अनुगृहीत उपदेश से, पुरातनदुर्वादियों का जीवन समाप्त हो गया; वैदिकों की हानि सदा के लिए मिट गयी; यह धरातल भी भाग्यवान बना; तत्व पर सभी शास्त्र संशय व विपर्ययों के विना निश्चित अर्थ के प्रतिपादक हुए और अनेकविध दोषपूर्ण जनों के वे दोष नष्ट हो गये। (विवरण - श्री रामानुजस्वामीजी के उपदेश से इतने प्रकार के कल्याण हुए कि दुर्वादि नष्ट हो गये; वैदिकों का संकट परिहृत हुआ; भूतल भी भाग्यवान बना; तत्वशास्त्रों में सब की शंकाएँ एवं भ्रम दूर हो गये; उनका निश्चित व वास्तविक अर्थ समझने में आया; और लोगों का पाप भी विनष्ट हो गया।)

श्री रामानुज स्वामीजी के उपदेश से दुर्वादी नष्ट हो गये।

क्रमशः

(गतांक से)

ब्रह्म के ध्यान-योग में लीन रहना :

चतुर्मुखी, चतुर्बाहु, आठ नेत्र, अनल सदृश शरीर से दीप्त होनेवाले ध्यान योग में पद्मासन पर बैठकर अनुपम नारायण अष्टाक्षरी मंत्र को जप करने वाले, नासिकाग्र पर दृष्टि केंद्रित करके स्पटिक सदक्षमाला हाथ में लेकर, मन पर नियंत्रण करके चित्त को चक्रपाणी के पादयुग्म पर केंद्रित करके परम भक्ति से योग करने तैयार होनेवाले ब्रह्म को वशिष्ठादि मुनियों ने देखा। उन को बहुत आश्चर्य हुआ। सभी ने वहाँ पर महाद्भुत निष्ठा से योगसाधना करनेवाले, परतत्व विवेक चिंतन करनेवालों को देखा। उन्होंने उस परमात्मा मधुसूदन पर मन निश्चल करके आत्मत्रान करनेवालों को देखकर वशिष्ठ ने इस रूप में कहा। ''हे दशरथेश्वर! इन महातापसियों के साथ मिलकर श्रीहरि महातप कर रहे हैं। इसलिए श्रीहरि के दर्शन इन को होना सत्य है। धन्यात्मा सर्वलोक पिता की भक्ति से ये यहाँ बसे हुए हैं। इनके तप से संतुष्ट होकर लक्ष्मीपति अवश्य इन्हें दर्शन देंगे। इसलिए इस दिव्य पुष्करिणी को काम्य फल प्रदायिनी समझ लीजिए, इस पर विश्वास कीजिए, हे राजन! अब आप अतिशीघ्र इस पुष्करिणी में डुबकी लगाकर सद्भक्ति से निष्ठा के साथ जप कीजिए।'' वशिष्ठ की बातें सुनकर दशरथ ने हँस कर ऐसा कहा। ''हे परमदेशिक! वह जप कैसा है बताइए।''

दशरथ के द्वारा श्री वेंकटेश्वर मंत्र को जपना :

यह सुनकर वशिष्ठ महामुनि ने पुत्रकामना करनेवाले दशरथ को दया से श्री वेंकटेश्वर के अष्टाक्षरी मंत्र का उपदेश दिया। तब दशरथ वशिष्ठ की पूजा करके पद्मासन पर बैठ कर पुत्र संतान के लिए महा निष्ठा के साथ जप करने लगे। तब वशिष्ठ भी शुचिर-भूत बन कर स्वयं भी तप करने लगे। तब आकाश में गर्जन ध्वनि सुनायी दी। ऐसा है कि मानो नवमेघ वृंद ने महाध्वनि की है। उस ध्वनि के कारण ध्यान परवश ब्रह्म, देवतागण ने अपने नेत्र खोले। तब दशरथ ने अपने आसन से उठ कर उन को प्रणाम किया। तब उन्होंने ''आप की वंशाभिवृद्धि होगी'' अद्भुत गति से उन्होंने राजा को वरदान दिया। 'कानों को चीरनेवाली आकाश में हुई भीकर ध्वनि किसलिए हुई है? इस का क्या कारण है?' इस रूप में सभी ने आकाश की तरफ देखा तो आकाश में महाप्रकाश दिखाई दिया। उसे देखना किसी के वश की बात नहीं है। दशरथ महाराज ने निष्ठा के साथ नित्य पुष्करिणी में स्नान करते और श्री वेंकटेश्वर का जप किया। तब जाकर दशरथ को श्री वेंकटेश्वर की कृपा प्राप्त हुई। फिर दशरथ ने अयोध्या लौटकर पुत्र कामेष्टि करके पुत्र संतान को प्राप्त किया। श्री वेंकटेश्वर की कृपा और स्वामी की पुष्करिणी की महिमा से

जलाधिदेव श्री वेंकटेश्वर

- आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी
मोबाइल - 9849670868

दशरथ महाराज की मनोकामना पूरी हुई। सूत ने इस रूप में शौनकादि मुनियों को स्वामी की पुष्करिणी की महिमा के बारे में बताया।

कुमारधारा :

स्वामिपुष्करिणी के तदूपरांत श्री वेंकटाचल में स्थित एक और पवित्र जल-स्त्रोत कुमारधारा है। इस जल-स्त्रोत से संबंधित एक कथा में साक्षात श्रीमन्नारायण या श्री वेंकटेश्वर स्वामी पात्रधारी है। आर्त भक्तों के उद्धरणार्थ श्री वेंकटेश्वर स्वामी सदा श्री वेंकटाचल पर विहार करते रहते हैं। विहार के समय एक दिन पहाड पर उन्होंने एक आर्ती विप्र को देखा। वह विप्र अत्यंत बलहीन और शुष्क शरीरवाला था। वह अपने भटके हुए पुत्र कौंडिन्य की खोज कर रहा था। वह उसे न पाकर अत्यंत दुखी था। वह रास्ता भी भटक गया था। वह वेंकटाद्री में कोई मार्ग पकड कर जा रहा था। घना जंगल था। निर्जन था। उसे भूख-प्यास भी लग रही थी। वह अब नीचे गिरनेवाला ही था। उसने अपने पुत्र को याद किया ''हे पुत्र कौंडिन्य! कहाँ चले गए हो?'' बोलते बहुत दुःखी हो रहा था। तब दीनरक्षक भगवान श्री वेंकटेश्वर ने उस के सामने खडे होकर बडी दया दिखाते इस रूप में कहा। ''हे वृद्ध ब्राह्मण! इस महा जंगल में क्यों आये हो? अब धरती पर तुम कुछ दिन रह पाओगे या नहीं। शायद अभी देह छोड कर जा सकते हो। अपने बारे में बताओ?'' यह सुनकर विप्र ने इस रूप में कहा। ''हे महात्मा! अब मुझे शरीर पर आसक्ति नहीं है। मनुष्यों का ऋण चुकाये बिना मैं कैसे जा सकता हूँ।'' कहा। इन बातों को सुनकर श्रीनिवास उस विप्र के हाथ को पकड कर उसे पावन तीर्थ के पास ले गए। उस विप्र से वहाँ पर स्नान करवाया। वहाँ स्नान करने के बाद वह सौ सालवाला वृद्ध ब्राह्मण सोलह सालों का युवक बन गया। सोलह कलाओं के साथ परिपूर्ण होकर बाल-युवक बन कर खडा हो गया। श्रीनिवास ने तब सहस्त्र शीर्ष, सहस्त्र बाहु, सहस्त्रपाद, सहस्त्र नेत्रवाले बन कर उस युवक को अपने विश्व-रूप दर्शन दिए। यह देख कर गगन से इंद्र देवादि ने फूलों की वर्षा बरसायी। धुंधुभी बजायी। हरि के सिर पर फूलों की वर्षा बरसायी। विश्वरूपी भगवान को देखकर उन्होंने उनकी खूब स्तुति की। तब श्रीनिवास उस विप्र की ओर देख कर ''तुम को धन-संपदा समृद्धि प्राप्त होगी। अब तुम देव ऋण चुकाने अपने आश्रम पर जाकर याग करो।'' ऐसी आज्ञा देकर श्रीनिवास अदृश्य हो गये। विप्र भी अपना निजाश्रम लौट गया। इस प्रकार वृद्ध ब्राह्मण इस तीर्थ में स्नान करके बाल सुकुमार युवक बने हैं। इसलिए इस तीर्थ का नाम ''कुमारधारा'' पड गया। इस तीर्थ में तीन महीने कोई जितेंद्रीय बनकर त्रिकाल स्नान करता है तो वह बज्र शरीरवाला बनेगा। वृद्धाप्य के बिना सुखी जीवन बितायेगा। श्री वेंकटेश्वर के अपने भक्तों पर होनेवाले दया गुण से ही यह संभव हो सका है।

उपर्युक्त जल-स्त्रोतों के अतिरिक्त श्री वेंकटाचल पहाड पर और भी अपार जल-स्त्रोत हैं। आज जिसे पाप विनाशन, आकाशगंगा, गोगर्भ, पसुपु धारा नाम से पुकारते हैं। वे भी जलाधिदेव श्री वेंकटेश्वर स्वामी के अक्षय कोष से निकली जल धाराएँ ही हैं। साथ ही अनेक भक्तों के साथ स्वामी की दिव्य लीलाओं से जडी हुई हैं। पहाडों से, घाटियों से, वन्य प्राणियों से, वनस्पतियों से परिवेष्ठित स्वामी के दर्शन तिरुमल की यात्रा से ही संभव है। जलाधिदेव स्वामी भक्तों के साथ-साथ वन्य प्राणी और वनस्पतियों की प्यास को अपने अक्षय कोष से बुझा रहे हैं। देवाधिदेव श्री वेंकटेश्वर का यह दिव्य संदेश है कि जल ही जीवन है। सारे प्राणियों को जीव-शक्ति सिर्फ जल के द्वारा ही संभव है। इसलिए जल के प्रति और जलाधिदेव श्री वेंकटेश्वर स्वामी के प्रति श्रद्धा और भक्ति रखना समस्त प्राणियों को अत्यावश्यक है।

❖ ❖ समाप्त ❖ ❖

(गतांक से)

तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर

(तिरुपति बालाजी)

हिन्दी अनुवाद - प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव
प्रो.गोपाल शर्मा

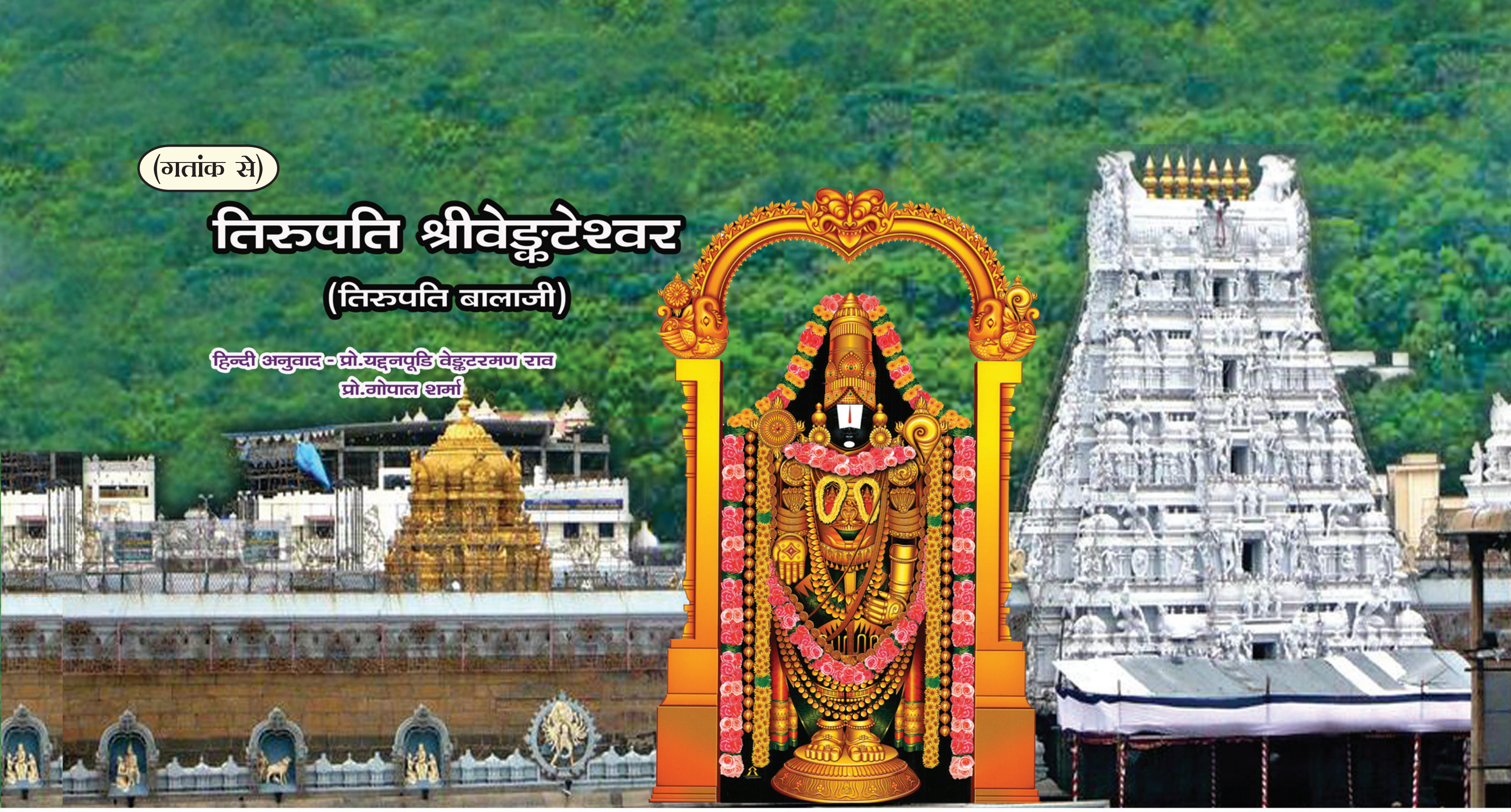

9. वैकुण्ठ तीर्थम्

यह तीर्थ भगवान के मंदिर से दो मील की दूरी पर ईशान्य की दिशा में विराजमान है। इस तीर्थ का उद्‌गम स्थान एक गुफा है। इसे 'वैकुण्ठ गुहा (गुफा)' कहते हैं। इसी के कारण इस तीर्थ का नाम 'वैकुण्ठ तीर्थ' पडा है।

त्रेतायुग में रावण संहार के लिए, श्रीरामचन्द्र जी की सेना (वानर) लंका की ओर निकल पडे। रास्ते में अंजनादेवी और हनुमानजी की प्रार्थना से श्रीराम ने सेना सहित श्रीस्वामिपुष्करिणी के तट पर ठहरे। वानर सेना आस-पास के पहाडों पर घूमने लगी। सेना के गज, गवाक्ष, गवया, शरह आदि कुछ वानर ईशान्य दिशा में एक दिन चले। उन्होंने एक स्थान पर एक गहन और अंधकारपूर्ण गुफा देखी। सभी उसमें घुसे। कुछ दूरी पर उन्हें एक प्रकाशवान नगर दिखा। वह सुवर्ण निर्मित नगर था। उसके फाटक और तोरण भी सोने से बने थे। नगर में सुंदर-सुंदर बगीचे थे। बगीचों के बीच स्वच्छ पानी के नगर थे। नगर के गोपुर, मण्डप, प्राकार आदि अमूल्य रत्नों से जडित थे। सभी नगर वासियों के चार-चार हाथ थे। उन हाथों में शंख, चक्र आदि शस्त्र थे तथा वे स्वच्छ धवल वस्त्र पहने हुए थे। मूल्यवान सुवर्ण आभूषणों से सुसज्जित थे। वे सानंद विचरण कर रहे थे।

उस नगर के मध्य में एक दिव्य विमान था। उसमें दिव्य सिंहासन पर एक दिव्य पुरुष विराजमान थे। उनके हाथ आसन के सिंहों के सिरों पर थे। ये आदिशेष के सहस्र फणों की छाया में विलसे थे। शंख-चक्र धारी थे। पीतांबर पहने थे। मणि-माणिक्यों से जडित आभरण और किरीट पहने हुए थे।

उर पर वैजयंती और वनमालाएँ विराजमान थीं। वक्षःस्थल पर श्रीवत्स था। देव-दासियाँ धवल चाँवर डुला रही थीं। दिव्य पुरुष का आनन उज्वल कांतियाँ बिखेर रहा था।

अकस्मात एक बलवान चतुर्भुज व्यक्ति वानरों को हाथ में झंडा लेकर डराने लगा। डर के मारे वानर सब गुफा से बाहर भागे। अपने साथियों के पास जाकर इस अनोखी घटना की बात कही। वे सब पुनः गुफा में घुसे। लेकिन वहाँ पूर्व दृश्य नहीं मिला। सब कुछ गायब था।

भगवान नारायण की कृपा से कुछ वानरों को ही उस सुंदर दृश्य का दर्शन लाभ मिला था। यह उनका सौभाग्य था। यह भगवान विष्णु का स्वार्गिक धाम का दृश्य था। इस धाम में रहकर भगवान सौभाग्यशाली भक्तों को ही इस प्रकार का दिव्य दर्शन देते रहते हैं। (वरा. पु. भाग -1, अ. 10)। इसीलिए यहाँ का तीर्थ 'वैकुण्ठ तीर्थ' है। तीर्थ जल परम पवित्र है। इस गुफा से प्रवाहित स्रोत के जल में पवित्र स्नान अत्यंत प्रभावकारी और सुखदायी है।

ऐसी वैकुंठ गुहा (गुफा) में प्रवेश और दर्शन मात्र से वानरों को मुक्ति मिली है। उनको भगवान विष्णु का सान्निध्य मिला है। वे आज भी सामान्यों की दृष्टि से बाहर हो, नित्य सेवारत हैं। वे रात्रियों के समय ही भगवान की आराधना करते हैं। उस तीर्थ का जल रजत ''कटोरियों'' में भरा मिलता है। भक्तों में वितरित होता है।

10. जाबाली तीर्थम्

यह तीर्थ मंदिर की उत्तरी दिशा में दो मील की दूरी पर स्थित है। जाबाली ऋषि यहाँ अपने शिष्यों सहित रहे थे। यहाँ रहकर जाबाली ऋषि ने भगवान की आराधना की थी।

बाद में, अगस्त्य ऋषि अपने शिष्यों के साथ यहाँ बहुत समय तक रहकर भगवान वेंकटेश्वर की पूजा की। (वरा. पु. भाग - 1, अ. 21, श्लो. 21 - 24)।

11. चक्र तीर्थम्

यह तीर्थ मंदिर की उत्तर पश्चिम दिशा में है। यहाँ श्रीवत्स गोत्र के पद्मनायक नामक भक्त ने इस परिसर में रहनेवाले राक्षसों को नाश कराने के लक्ष्य से बारह वर्ष पर्यन्त श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी की तपस्या की थी। भगवान उनकी तपस्या से प्रसन्न हुए। उन्हें उसी प्रान्त में रहने के लिए कहा। तत्पश्चात् भगवान ने अपने सुदर्शन चक्र को दानवों का संहार करने की आज्ञा दी। राक्षसों का दमन हुआ। पद्मनायक ने वहीं तपस्या की और मुक्ति पायी। (स्कंद पु. भाग - 1, अ. 13)।

सुंदर नामक एक और श्रीरंगम् का ब्राह्मण शापग्रस्त होकर राक्षस बन गया था। उसने वशिष्ठ महर्षि के आदेश के अनुसार इस तीर्थ पर पहुँचकर तपस्या की। अपना पूर्व रूप पाया और अंत में मुक्ति भी पायी। (स्कंद पु. भाग - 1, अ. 14)।

इस तीर्थ पर श्रीलक्ष्मी नृसिंह और सुदर्शन चक्र की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। कार्तिक कृष्ण पक्ष द्वादशी को यहाँ ''पायसम्'' (चावल में दूध मिलाकर उबाला जाता है और बाद में चीनी मिलायी जाती है) का नैवेद्य मूर्तियों को अर्पित होता है। यह बालाजी के यहाँ से आता है। यह तीर्थ प्रसाद के रूप में भक्तों में वितरित होता है।

12. रामकृष्ण तीर्थम्

यह तीर्थ मंदिर की उत्तर दिशा में छः मील की दूरी पर स्थित है। कहा जाता है कि यहाँ श्रीकृष्ण ने तपस्या की थी और तीर्थ का निर्माण भी करवाया। बाद में रामकृष्ण मुनि नामक एक तपस्वी ने भी यहाँ कठोर तपस्या की। उनकी तपस्या शताब्दियों तक चली। तपस्वी की चारों ओर वल्मीक बना। उनकी तपस्या से डर कर इन्द्र ने मूसलादार वर्षाएँ की, बिजलियाँ गिरायीं। लेकिन तपस्वी टस से मस नहीं हुए। अपनी तपस्या जारी रखी। अन्ततोगत्वा वल्मीक ढह गया। श्री महाविष्णु गरुड वाहनारूढ हो प्रत्यक्ष हुए। उस समय विष्णु ने कहा - ''पुष्या नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के दिन मकर मास (जनवरी) में मैं आपकी तपस्या से प्रसन्न होकर प्रत्यक्ष हुआ हूँ, दर्शन भी दिया। जो भी भक्त इस दिन को इस तीर्थ में नहायेगा वह सब प्रकार की व्यथाओं और बाधाओं से मुक्त होगा।'' (स्कंद पु. अ. 5)।

इस विशेष तिथि के अवसर पर अनेक भक्त यहाँ आते हैं और तीर्थ में स्नान करते हैं। श्रीकृष्ण की पूजा करते हैं। जो कुछ भी नैवेद्य के रूप में अर्पित होता है वह सब भक्तों में वितरित होता है।

क्रमशः

गतांक से

अनुक्रम - VIII

श्रीमद्भगवद्गीता

तेलुगु मूल -
श्री कुप्पा विश्वनाथ शास्त्री

हिन्दी अनुवाद - श्री बी.राजीव रत्न
मोबाइल - 9440926830

"अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि।

युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः॥"

पांडव सेना में बहुत से शूरवीर हैं। बड़े-बड़े धनुर्धारी हैं। बड़े-बड़े धनुष हैं। सभी में असीम पराक्रम हैं। भीम और अर्जुन के समान है। युयुधान, विराट, द्रुपद जैसे वीर है। इसमें दुर्योधन की क्या ईर्ष्या दिखलाई पड़ती है? क्षुणता से देखने पर "युयुधान" ऐसा पहले कहा अर्थात् अच्छा युद्ध करने वाला। "सात्विकी" यह उपाधी रिश्ते में कृष्ण के भाई हैं उन्हें प्राप्त है। क्यों सात्विकी का नाम पहले उच्चरित कर रहा है? पांडवों में वीरों का नाम बताना हो तो पहले अर्जुन का ही बताना होगा। इसमें दुर्योधन की ईर्ष्या कहाँ दिखती है। कुछ गहराई से देखने पर किन-किन के नाम वह ले रहा है, लेते समय उस नाम के व्यक्ति से दुर्योधन का संबंध क्या है इससे पहले उनके और इनके संबंध क्या हैं देखने पर पता चलेगा। 'युयुधानः' पहले कह रहा है। 'ययुधानः' अर्थात अच्छा युद्ध करने वाला। यह उपाधि सातवीकी का नामक कृष्ण का रिश्ते में भाई एक युद्धवीर को है।

उनका नाम हम सब को भी सुना जैसा लगता है। यह सातवीकी हम सभी को युयुधान वह नाम पहले उच्चरित कर रहा है। सातवीकी का नाम ही पहले क्यों उच्चरित कर रहा है? पांडवों में वीरों के नाम बोलने हैं पहले अर्जुन को ही बताना।

मध्य स्थाई में रहने वालों को भी यह भगवद्गीता काम करती है ऐसा बताया गया है। इस प्रकार देखने पर धृतराष्ट्र उन्नत स्थिति में रहने वाले राजा है। उस स्थाई में रहने वालों को भी यह भगवद्गीतामृत उपयोगकारी है। ऐसा इन तीनों द्वारा एक और प्रकार से सूचित कर रहे हैं। ऐसा हम किसी भी प्रकार सोचे किसी भी स्थान पर हम अवश्य प्रवेश करते हैं। प्रवेश करने से हमें भी वह भगवद्गीतामृत पाने की योग्यता परिपूर्ण रूप से होती है। किंतु किस स्थान पर प्रवेश करें। किस विभाग में प्रवेश करें। भगवद्गीतामृत सभी को उपयोगकारी है।

क्रमशः

शांतिनिलयवासिनी देवी माँ

तमिल में - श्रीमती लक्ष्मी के. ताताचार्या

अनुवादक - श्री आर संघनिधि

पद्मप्रिये पद्मिनी पद्महस्ते पद्मालये पद्मदलायदाक्षी।
विश्वप्रिये विष्णु मनोनुकूले त्वत्पाद पद्मम् मयी सन्निदत्स्वः।।

तिरुचानूर मंदिर में सुंदर कमल पर आसीन होकर अपने भक्तजनों को दर्शन देती देवी लक्ष्मी को अलर् मेल् मंगै याने कमल पर आसीन देवी के नाम से बुलाते हैं। देवी तो हजारों पंखुडियों से होने वाले कमल पर प्रकट होने के कारण 'पद्मावती' के नाम से भी बुलाते हैं। यह मंदिर तिरुचानूर नामक गाँव में स्थित है। पहले यह गाँव 'तिरुच्चुगनूर' नाम से जाना जाता था। इस गाँव में अपने सुंदर मंदिर में रहकर विशेष शासन चलाती देवी लक्ष्मी भगवान तिरुमल बालाजी की राजमहिषी है। देवी के प्रसिद्ध इस मंदिर के बारे में हम बहुत कुछ जानते तो हैं। फिर भी अब कुछ अपरिचित विषयों के बारे में याने तिरुमल तिरुपति देवस्थान की ओर से देवी लक्ष्मी के लिए की जाने वाली विशेष उपासनाओं के बारे में और प्रशासनिक प्रबंधों में किये गये कुछ नए परिवर्तन के बारे में देखने वाले हैं।

शांतिनिलयवासिनी

तिरुमल सप्तगिरि पर निवास करते श्री विष्णु के मन्दिर को 'आनंदनिलय' और उनके विमान को 'आनंदविमान' के नाम से बुलाते हैं। उसी प्रकार तिरुचानूर में देवी माता के नित्य निवासस्थान अर्थात मंदिर को 'शांतिनिलय' और वहाँ के विमान को 'शांतिविमान' कहते हैं। इस के लिए एक कारण भी है। याने एक बार यहाँ के सात पर्वत में एक पर्वत पर शांतिभवन नामक स्वर्ण मंदिर में देवी माता निवास करती थी। देवी माता लक्ष्मी की कृपा भक्तों को 'आनंदनिलय' के निवासी भगवान बालाजी से भी बढकर अधिक मिलती थी। देवी की कृपा पाने के लिए भक्त बडी संख्या में आने लगे। रोज मंदिर में अधिक संख्यावाले भक्तजनों आने के कारण वह ऊँचा पर्वत ऐसे ही नीचे समेटकर तिरुचानूर में आकर रुक गया।

कहा जाता है कि देवी लक्ष्मी कमल दल पर आसीन रहकर अभय मुद्रा में अपने पास आनेवाले भक्तजनों को दर्शन देती और उनके निवेदन को ध्यान से सुनती है। फिर व्यूहलक्ष्मी के रूप में भगवान विष्णु के हृदय पर स्थान पाकर उनकी कृपा उन भक्तजनों को पहुँचाती है। हमें आनंद की प्राप्ति के लिए मन में शांति का होना आवश्यक है न। देवी लक्ष्मी अपने मन्दिर में रहकर हमें ऐसी शांति दिलाती हैं। भक्तजन कई प्रकार

की वेदनाओं और दु:खों के साथ आध्यात्मिक यात्रा में तिरुमल तिरुपति आ पहुँचते हैं। वे पहले तिरुचानूर आकर देवी माता का दर्शन करते हैं। देवी माता उनके मन के क्लेषों को दूर करके उनको शांति दिलाती है। देवी माता की कृपा से उन्हें शांति मिलती है। फिर वे बडी शांति से तिरुमल में जाकर भगवान विष्णु का दर्शन करके योग्य वर प्राप्त कर आनंद का अनुभव करते हैं। इसलिए तो भगवान विष्णु के मंदिर को आनंद विमान और देवी लक्ष्मी के मंदिर को शांति विमान कहते हैं। अब आपको मालूम हुआ होगा कि तिरुचानूर मंदिर तो शांति विमान है और यहाँ देवी माँ लक्ष्मी का दर्शन कर सकते हैं।

तिरुचानूर मंदिर तो इतना विशाल है कि यहाँ अनेक अन्य मंदिर भी हैं। इसके परिसर में श्री वेणुगोपाल स्वामीजी का मंदिर भी हैं। भक्तजनों के निवेदन पर पद्मावती और भगवान श्रीनिवास का नित्य कल्याण (विवाह) उत्सव इस मंदिर के सामने स्थित बडे मंडप में मनाया जाता है। पुराण कथा के अनुसार महाभारत युद्ध के बाद बलराम और श्रीकृष्ण मन में शांति पाने के लिए आध्यात्मिक यात्रा करते हुए यहाँ आ पहुँचे थे। वे इस तिरुचानूर दिव्य क्षेत्र में शुक महर्षी के आश्रम में विशेष अतिथि के रूप में ठहरे थे। महर्षी ने बडे प्रसन्न मन से उनका स्वागत सत्कार किया और उनको इस मंदिर में रहने की प्रार्थना की। उनकी प्रार्थना पर दोनों ने अर्चारूपी बनकर दर्शन दिये। इससे खुश होकर महर्षी शुक ने उनके लिए मंदिर का निर्माण किया। वे दोनों यात्री बनकर आए थे, इसलिए यहाँ उनकी पादुकाओं को आज भी दर्शन कर सकते हैं। इस मंदिर में श्री पांचरात्र आगम के अनुसार उपासनाएँ की जाती हैं। हर महीने रोहिणी नक्षत्र के दिन और श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के पर्व पर विशेष पूजाएँ की जाती हैं। मंदिर स्थापित किए उस महान महर्षी के नाम से ही यह स्थान 'तिरुशुकनूर' के नाम से बुलाया गया। धीरे-धीरे यह नाम 'तिरुचानूर' के नाम से बदल गया।

देवी लक्ष्मी के इस विशाल मंदिर के एक भाग में श्री सुंदरराजस्वामी का मंदिर है। ई.1547 में प्राप्त एक ताडपत्र के द्वारा मालूम होता है कि श्रीदेवी, भूदेवी समेत श्री सुंदरराजस्वामी की मूर्ति कहीं लुप्त होकर किसी एक व्यक्ति के द्वारा फिर प्राप्त हुआ था। बताया जाता है कि उस व्यक्ति ने इस मंदिर का उद्धारण किया और वे भगवान की मूर्तियों को स्थापित करके पूजा करते थे। यहाँ भी श्री पांचरात्र आगम के अनुसार पूजाएँ की जाती हैं। हर महीने उत्तर

फाल्गुनी नक्षत्र के दिन विशेष अभिषेक होता है और श्रावण महीने में अवतार उत्सव मनाया जाता है। इस मंदिर के सामने स्थित एक मण्डप में तिरुमल के जैसे तिरुचानूर मंदिर में भी एक तुलाभार (तराजू) स्थापित किया गया है। तिरुमल जैसा ही भक्तजनों के लिए अपना निवेदन पूर्ण होने के बाद अपने वजन के अनुसार दान देने के लिए उचित प्रबंध किया गया है। क्योंकि भगवान विष्णु ने अपने मंदिर में किए जाने वाले सभी विशेष उत्सव अपनी प्राण प्रिया देवी श्री पद्मावती मंदिर में भी करने की आज्ञा दी है।

उत्सव

अब तिरुचानूर में स्थित देवी लक्ष्मी के लिए भी अनेक उत्सवों का प्रबंध किया गया है। नित्य कल्याणोत्सव के साथ हर सोमवार सुबह अष्टदल पाद पद्म आराधना, बुधवार-शत कलशाभिषेक आदि होते हैं। इस मंगल समय पर देवी माता का शत नामार्चन भी किया जाता है। हर गुरुवार - तिरुप्पावडा उत्सव होता है। तब नैवेद्य के रूप में इमली से बनाए गये अन्न को देवी माता के गर्भगृह के सामने रखकर पूजा करते हैं। हर शुक्रवार के दिन तोटोत्सव याने उपवनोत्सव होता है। तब यहाँ से 100 फूट दूरी पर एक उपवन है। इसे तोळप्पूंगा या शुक्रवारपुतोटा कहते हैं। उस उपवन के बीच 16 खंभों से बना एक वसंत मण्डप होता है। हर शुक्रवार देवी का तिरुमंजन उत्सव यहीं हो रहा है। अब महामारी कोरोना के कारण यह उत्सव मंदिर के अंदर कल्याणोत्सव मनाने के स्थान में ही मनाया जाता है। इसके बाद देवी माता की सहस्त्र दीपालंकार सेवा नामक झूलोत्सव होता है। यह उत्सव भी प्रारंभ में आस्थान मण्डप में होता था। हर शनिवार के दिन सामवेद पुष्पांजली उत्सव होता है। पंडितगण सामवेद गाते है और पुष्पों से देवी माता की अर्चना होती है।

नैवेद्य

नैवेद्य के रूप में प्रारंभ में इमली अन्न, दधियान्न, मिष्टान्न, रवा केसरी आदि समर्पित करते थे। इनमें शुक्रवार के दिन इमली अन्न का विशेष स्थान है। लेकिन आजकल दोपहर के समय लड्डू, वडा आदि का निवेदन किया जाता है। यह लड्डू दाल चूर्ण को देशी घी से मिलकर शक्कर पानी मिलाकर बनाया जाता है। बडे स्वादिष्ट इस लड्डु को 'अमृत कलश' कहते हैं। कल्याणोत्सव के समय पर लड्डू, अप्पम्, मिष्टान्न, इमली अन्न आदि को निवेदन के रूप में समर्पित करते हैं। झूलोत्सव के समय पर छोला और तिरुप्पावडा के उत्सव पर इमली अन्न, जलेबी आदि को समर्पित करते हैं।

शुक्रवार तिरुमंजन सेवा के बाद कण्णमुदु के नाम से दूधखीर, गुडजल, मिष्टान्न आदि समर्पित करते हैं। मूर्ति को सजाने के बाद इमली अन्न, दोसा, छोला आदि को समर्पित करते हैं। इस प्रकार तिरुमल में भगवान विष्णु को समर्पित करने वाले पदार्थों के बराबर तिरुचानूर में भी देवी माता को समर्पित करके उसके बाद उन्हें भक्तजनों को वितरित करते हैं।

कार्तिक मास में श्री पद्मावती माता का ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है। आठवें दिन देवी का रथोत्सव होता है। कई साल से आठवें दिन के सुबह लकडी से बनाए गए रथ पर माता पद्मावती का उत्सव मनाया जाता था। परंतु आजकल तिरुमल में संपन्न होने वाले उत्सव की तरह छठे दिन शाम को स्वर्ण रथ का उत्सव तिरुचानूर में भी संपन्न होता है। साल में एक बार देवी माता स्वर्ण रथ पर आसीन होकर भक्तजनों को दर्शन देती है। भक्तजन ब्रह्मोत्सव के अवसर पर, वरलक्ष्मी व्रत पूजा के दिन शाम के समय देवी माता को स्वर्ण रथ पर दर्शन कर सकते हैं।

इसमें संदेह नहीं है कि भक्तजन तिरुमल जाने के पूर्व तिरुचानूर में स्थित देवी माता श्री अलर्मेल् मंगा याने पद्मावती देवी के पास आकर यदि अपने दुःखों को कहकर देवी के पवित्र चरणों को नमस्कृत करेंगे तो देवी उनको दुःख से मुक्त करके उनके जीवन में शांति स्थापित करेंगी।

❖❖❖

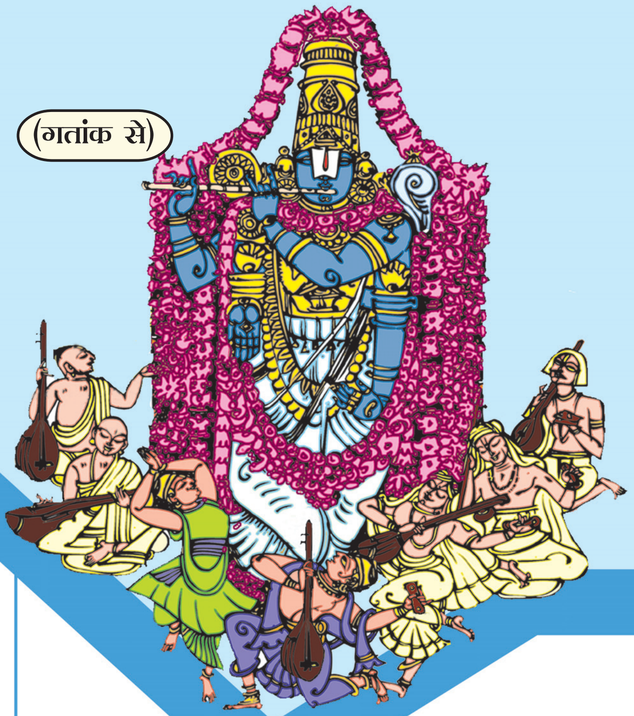

(गतांक से)

हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश

तेलुगु मूल - श्री एस.नागराजाचार्युलु

हिन्दी अनुवाद - डॉ.एम.आर.राजेश्वरी

मोबाइल - 9490924618

''वार शनि चतुर्दशी कृष्ण पुष्यदि।
ई रीति यलि कण्ड़ इन्दिरेशन कूड।।
रौद्रि संवत्सर अर्धरात्रि यल्लि
भद्रमूरुति याद भवहरन कूड।।
गुरुपुरंदरन उपदेशबल दिन्द
सिरिवि जयविठलन चरण तकैसि।।''

अपने गुरु पुरंदरदास के उपदेश के बल पर कवि ने विठल के चरणों का दर्शन कर धन्य हुए।

भगवान के आदेशानुसार श्री विजयदास, तिरुमल पहुँचते हैं, भगवान का दर्शन करके, तिरुमल के सौंदर्य तथा दर्शन के विधि-विधान के बारे में कवि ने लंबे कीर्तन में वर्णन किया।

जिस भांति अन्नमाचार्य ने 'अदिवो अल्लदिवो श्री हरिवासमु' कीर्तन में भक्ति प्रदर्शित किया, उसी भांति भक्ति तथा उमंग के साथ कवि ने भी निम्नांकित शब्दों के साथ गीत की रचना की, यथा-

''नोडिदे नानोडिदे
मूडलगिरियवासन यात्रेय माडिदे ना माडिदे''

(मैंने पूर्वाभिमुखी श्रीनिवास को देखने तिरुमल पर पहुँचा, मैंने दर्शन भी पाया।)

''बेट्टव कंडेनु सोपानंगलु। निट्टु सुरिक्कदे एरिदे।
कट्ट कडियणगोपुर शिखर। दिट्टसि कण्णिलि नोडिदे।।''

(पहले मैंने पर्वत को देखा, बाद में सीढ़ियों को, बाद में गालिगोपुरम् पहुँचा।)

कवि बाद में कहते हैं कि- मैंने तिरुमल पहुँचते ही बेडिआंजनेयस्वामी का दर्शन किया, उसके उपरांत अंतर्गत ताप को शांत करनेवाले श्रियःपति के मंदिर के महाद्वार का दर्शन किया। मंदिर के निकट पहुँचकर, बगल में स्थित स्वामिपुष्करिणी में पुण्यस्नान करके, श्री वराह स्वामी का दर्शन कर, त्वरित गति से श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दर्शन के लिए भागा।

''गुडियपोक्केनु गरुड गंभद सडगरवनु नानोडिदे।
ओडने प्राणाचारदवरु पडेद वरगलकेलिदे।''

गीतकार, मंदिर में प्रवेश करके ऐसा कहते हैं - मैंने बडी दीन-हीन स्थिति में भक्तों को साष्टांग प्रणाम करनेवाले शरणागत भक्तों को निराशा के भाव में अस्थित देखा। उसके बाद इन भक्तों पर भगवान ने क्या ही कृपा-कटाक्ष बरसाकर, इन भक्तों के दुःख को दूर किया, उसे भी मैंने अपने अनुभव में पाया।

उसके उपरांत, मैंने श्रीहरि के लिए नैवेद्य बनाये जानेवाले पाकशाला को देखा, वहाँ उपस्थित अन्नपूर्णादेवी (वकुलादेवी) और उसके बाद विमान वेंकटेश्वरस्वामी का दर्शन किया।

मैंने तीर्थ को स्वीकारा तथा प्रसाद का वितरण होते हुए देखा। भक्ति के साथ, भगवान की स्तुति करनेवाले असंख्याक भक्तों को देखा।

''द्वार पालकरिगे साष्टांगदलि नम-स्कारवनु माडिदे।
भोरने कटांजनद फल्गुणि बं-गार बागिलवनोडिदे।।''

मैंने मंदिर के द्वार के दोनों ओर स्थित द्वारपालकों को देखा, उन्हें नमन करके मैंने वहाँ के बंगारुवाकिलि (सुवर्ण द्वार) को देखा।

तुरंत ही कवि कहते हैं- मैंने वहाँ सैकड़ों सोम-सूर्य के तेज पुंज समान भासित होनेवाले श्री वेंकटेश्वर स्वामी के चरणयुग्म को देखकर पुलकित हो उठा और उस भगवान का दर्शन लिया।

''इट्टिद्द अंदिगे उट्टपीतांबर - कट्टिद्द दट्टे बड्याण।
झटि कंकणाकरदलायुध - इट्टि कस्तूरियनोडिदे।।''

कवि भावविभोर होकर कहते हैं- मैंने स्वामी के चरणकमलों पर बाँधे गये नूपुर, उनके शरीर पर पहनाये गये पीतांबर, उस पर सुवर्ण कटिबंध, हाथों पर पहनाये गये कंकण, कटि पर लटकते नंदक खड्ग तथा माथे पर लगाये गए कस्तूरी तिलक को देखा।

विविध सुगंधित फूलों की मालाओं से, अनेकानेक अमूल्य आभूषणों से सुअलंकृत श्रीनिवास भगवान की श्रृंगार मूर्ति को मैंने अपने इन चर्मचक्षुओं से देखा।

''जयजय जगदीश जगन्निवास।
जयजयलक्ष्मि परितोष।
जयजय विजय सर्वेशा जयजय।
सर्वेश जयवेन्दु स्तोत्रव माडिदे।।''

कवि के हृद्यानंद की सीमा नहीं रही। वे ऐसा कहते हैं- मैंने भगवान का जयजयकार किया - तुम इस जग के पिता हो, लक्ष्मी देवी के संतोष के तुम कारक हो, तुम हर जगह विजय प्राप्त करते हो, तुम आदि-मध्य-अंत रहिता हो, तेरा जय-जय हो स्वामी, तेरा जय-जय हो।

इसके बाद कवि यह कहते हैं कि मैंने भांति-भांति के प्रसाद(नैवेद्य) को वितरित होते देखा। कर्पूर आरती देते समय, मैंने बिना पल्क झेंपे, श्रीनिवास भगवान की मंगलमूर्ति को एकटक देखता रह गया। गीतकार अपने संकीर्तन में अपने द्वारा तिरुमल के भगवान के दर्शन का विवरण इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं-

''हिम ऋतु प्रथम मासद दशमी। हिमकरवार दिनदल्लि।
क्रम दिंदलि पोगि बिम्ब मूरुतिया। विमल चारित्र्यवनोडिदे।।''

हेमंतऋतु के मार्गशीर्ष मास के दशमी, सोमवार के दिन को, मैंने भगवान के दिव्य मूर्ति का दर्शन किया। मैंने पुरंदरदास के अनुग्रह से इंदिरापति, विजयी विठल वेंकटेश्वर स्वामी जो आश्रित भक्तों के उद्धारक हैं, उनका दर्शन किया।

गीतकार विजयदास, भगवान वेंकटेश्वर स्वामी के नाम सुनते ही सुध-बुध खो बैठते हैं। भक्ति की परवशता में वे अनेकानेक प्रकार की स्तुतियाँ अपने कीर्तनों में पुष्पवृष्टि की भांति बरसा देते हैं। भगवान, भक्तप्रिय हैं। उन्होंने ने अपने प्रिय भक्तों पर अन्यान्य प्रकारों से कृपा दिखाई। उनके अवतार संबंधी इतिहास इसका साक्षी है। भगवान ने पुरंदरदास जी के हाथों में पानी का लोटा पकड़वाया, अन्नदान के समय अप्पण्ण नाम से परोसनेवाले के रूप में घी परोसा। यह इतिहास है। श्री विजयदास को तिरुमल पहुँचते ही दर्शन प्राप्त नहीं हुआ था। इसका कारण यही था, कि वे ब्रह्मोत्सव के समय तिरुमल पहुँचे थे। दर्शन नहीं होने के कारण वे बहुत उतावले हुए, दर्शन प्राप्ति के लिए उद्विग्न हो उठे। बड़ी-बड़ी कठोरता से प्रार्थना किया।

क्रमशः

श्रीवैष्णव का 108 दिव्य देश

- श्रीमती विजया कमलकिशोर तापड़िया
मोबाइल - 9482365339

दिव्यदेश 108 प्रस्तावना

भगवान सर्व व्याप्त हैं। सर्वान्तर्यामी हैं। यह युग (कलियुग) अर्चावतार का युग हैं। भारतदेश मन्दिरों का महान देश है। भारत में हजारों मन्दिर हैं। भारत में प्राचीन काल से मन्दिरों की बडी सामान्यता है और ये पवित्र माने जाते हैं, जहाँ अर्चामूर्ति भगवान विराजमान होकर सब भक्तजनों को अनुग्रह कर रहे हैं।

भगवान की पाँच अवस्थाएँ आचार्यजनों ने बताई है - पर, व्यूह, विभव, अर्चावतार एवं अन्तर्यामी। भक्तों के लिये उपरोक्त सब अवस्थाएँ बराबर मान्य है। वे प्रत्येक स्वरूप में भगवान के दर्शन को उत्सुक रहते हैं। लेकिन, अर्चावतार यह हमारे लिये सरल एवं सुलभ है।

भारत के कई हजारों मन्दिरों में भगवान अर्चारूप में विराजमान हैं जहाँ भक्तों को भगवान का विशेष सानिध्य प्राप्त होता हैं।

अर्चावतार का महत्त्व इस में है कि देश और काल विशेष से बहुत से विभावावतारों का अर्चारूप में सुलभता से दर्शन कर पाते हैं। आचार्यों का कथन है कि - मनुष्य मात्र के लिये यह भक्ति, मुक्ति का सरल मार्ग है। दर्शन के समय नौ प्रकार के पवित्र साधनों से भगवदनुभव प्राप्त कर सकते हैं - पूजा, स्तुति, प्रार्थना, अर्चना, भजन, कीर्तन, नाम संकीर्तन, पादसेवन आदि।

वेद-पारायण, 4000 दिव्यप्रबन्ध एवं दूसरे प्रबंधों का पाठ, विभिन्न विभावावतारों का पुराण-वाचन एवं श्रवण, सत्संग आदि के द्वारा मन्दिरों में भगवान का सानिध्य प्राप्त होता हैं।

ये मन्दिर आध्यात्मिक, पौराणिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं।

अर्चावतार एवं मन्दिरों का महत्त्व बढाने में आल्वार सूरियों की बड़ी भूमिका है। आल्वार जन इस देश भर में संचार करते हुए इन मन्दिरों में भगवान के दर्शन एवं मंगलाशासन करने पहुँच जाते थे। भगवान के वैभव की स्तुति एवं गुणगान में लग जाते थे।

भगवान के दिव्य दर्शन से सम्मोहित होकर गहरी भक्ति-भावनाएँ उनके हृदय में प्रस्फुटित होकर सुन्दर दिव्य पद में सहज प्रवाहित हुए, जिन्हें दिव्यप्रबन्ध कहा गया।

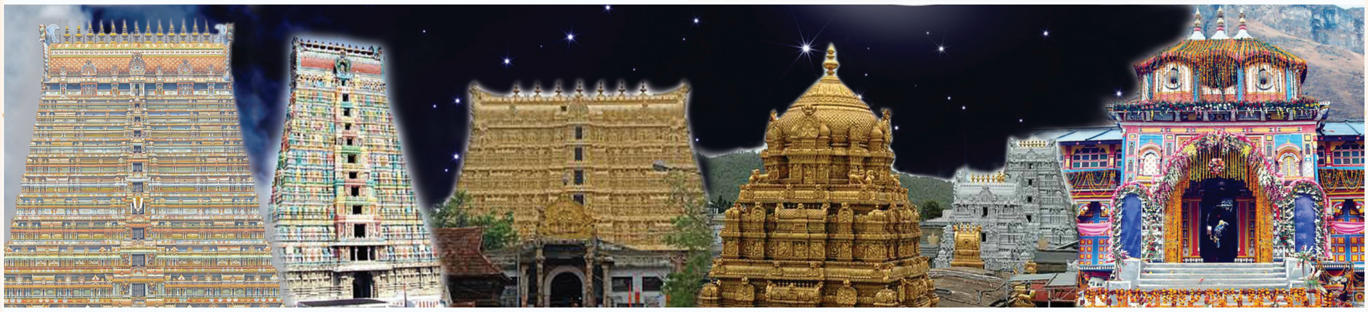

आल्वारों के मंगलाशासन द्वारा मन्दिरों का दिव्यत्त्व प्रकाश में आया ये मन्दिर दिव्यदेश क्षेत्र कहलाये जाने लगे। भक्तजनों को इन दिव्य पदों से बड़ी प्रेरणा मिलती रही। इनके अलावा अनेक सन्त आचार्यो ने इनका अनुकरण कर इसको सुर भी आहे बढाया।

भक्तजन इन दिव्यदेश मन्दिरों के दर्शन करके अपने को धन्य मानते हैं एवं यहाँ के दर्शन कर मानसिक शान्ति प्राप्त करते हैं। उनका इह लोक एवं परलोक भी भव्य बनता है। श्रीवैष्णव भक्तों की जानकारी के लिये इन 108 दिव्यदेशों के नाम और सब दिव्यदेशों की जानकारी देने का प्रयास किया जायेगा। विश्वास है कि इस जानकारी से वाचक जन अवश्य लाभान्वित होंगे।

1) श्रीरंगम, 2) उरैयूर (तिरुक्कोळी), 3) करम्बनूर (उत्तमर कोइल), 4) तिरुवैल्लरै (श्वेतगिरि), 5) अनबिल, 6) तिरुप्पर नगर (कोइलडि), 7) कंडियूर (त्रिमूर्ति क्षेत्र), 8) तिरुक्कुडलूर, 9) कपित्तलम (कृष्णरन्य क्षेत्र), 10) पुल्लम भुतंकुडि, 11) आदनूर, 12) तुरुक्कुडन्दी - कुंभकोणम, 13) तिरुविन्नगर, 14) तिरुनरैयुर (नाच्चियार कोइल), 15) तिरुच्चैरै, 16) तिरुक्कन्न मंगई, 17) तिरुक्कन्नपुरम, 18) तिरुक्कननंकुडी, 19) तिरिनागई, 20) तंजाऊर, 21) नंदिपुर विन्नगरम, 22) वैलियंगुड़ी, 23) तिरूवलुन्दूर, 24) शिरुप्पुलियुर, 25) तिरुत्तलैच्च नान्मदियम, 26) तिरुइंदलूर, 27) तिरुणांगुर, 28) तिरुक्कालि श्रीराम विन्नहर, 29) तिरुअरिमेय विन्नगरम (तिरुणांगुर), 30) तिरुवण पुरुषोत्तमन (तिरुणांगुर), 31) तिरुचेम्पोन चेयकोइल (तिरुणांगुर), 32) तिरुमामणिमाडकोविल (तिरुणांगुर), 33) तिरुवैकुन्द विन्नहरम (तिरुणांगुर), 34) तिरूवालि एवं तिरुनगरि, 35) तिरुत्तेवनार तोहै (किलच्चलै) माधव पेरुमाल कोविल, 36) तिरुतेत्रीयम्बलम (तिरुणांगुर), 37) तिरुमणिकूडम (तिरुणांगुर), 38) तिरुवेल्लकुलम (अण्णन कोइल), 39) तिरुपार्त्तन पल्ली (तिरुणांगुर), 40) तिरुच्चित्तिरकूडम (चिदम्बरम), 41) तिरूवहिन्द्रपुरम, 42) तिरुक्कोवलूर (गोपुरम), 43) काँचीपुरम वरदराज मन्दिर (काँची), 44) तिरूवेह्लका (काँचीपुरम), 45) अष्टभुज क्षेत्र (काँचीपुरम), 46) तिरुत्तणका (तुप्पूल-काँचीपुरम), 47) तिरुवेलुक्काई (काँचीपुरम), 48) तिरुऊरहम (काँचीपुरम), 49) तिरुनीरहम (काँचीपुरम), 50) तिरुक्कारहम (काँचीपुरम), 51) तिरुक्कारवाणम (काँचीपुरम), 52) तिरुप्पाड़हम (काँचीपुरम), 53) तिरु निलात्तिंगल (काँचीपुरम), 54) तिरुक्कलवानूर (काँचीपुरम), 55) तिरुप्पलवन्नर (काँचीपुरम), 56) तिरुप्परमेश्वर विणमहरम (काँचीपुरम), 57) तिरुप्पुटकुलि, 58) तिरुनिन्द्रवूर (तिन्ननूर), 59) तिरुएव्वुल (तिरुवल्लूर), 60) तिरुवल्लीक्केणि (बृन्दारण्य क्षेत्र), 61) तिरुनीरमलै (तोयाद्री क्षेत्र), 62) तिरुइडवेंदै-(तिरुविडन्दइ), 63) तिरुक्कडल मल्लई (महाबलिपुरम-अर्धसेतु), 64) तिरुक्कडीकै-शोलिंगपुरम (चोलसिंहपुरम)।

उत्तर भारत के दिव्य देश

65) अयोध्या, 66) तिरुनैमिषारण (नैमिशार क्षेत्र), 67) तिरुपिरिति-(जोशी मठ) नन्द प्रयाग, 68) तिरुक्कन्दम कड़ीनगर (देवप्रयाग), 69) बदरीनाथ (तिरुबदरियाश्रम), 70) तिरुशालग्रामम (सालग्राम)-मुक्तिनाथ, 71) तिरु वडमदुरै - (मथुरा) (वृन्दाबन, गोवर्धन सहित), 72) तिरूवायप्पाडि-गोकुलम, 73) तिरु द्वारका, 74) अहोबिलम, प्रह्लाद नरसिंह मंदिर-(कील अहोबिलम), 75) तिरुपति/तिरुमलै (तिरुवेंकटम)।

केरल राज्य

76) तिरुनावाय, 77) तिरुवितुवक्कोडु (तिरुविंजिकोडू), 78) तिरुकाटकरै (त्रिकाकरु), 79) तिरु मूलिकलम, 80) तिरुवल्लवाल (तिरुवल्ला) श्री वल्लभ क्षेत्र, 81) तिरुक्कड़ीत्ताणं, 82) तिरुच्चेकुंडुर-(चेंगनूर), 83) तिरुप्पुलियूर (कुट्टनाडु), 84) तिरूवारन विलै, 85) तिरुवन्दूर (तिरुवमुणडुर), 86) तिरु अनंतपुरम, 87) तिरूवात्तारु, 88) तिरुवण परिशारम (तिरुपति सारम)

पण्डिय देश के दिव्य क्षेत्र

89) तिरुक्कुरङ्कुड़ी (वामन क्षेत्र), 90) नांगुनेरी (तिरुच्चिरिवर मँगै), 91) तिरुवैकुण्ठम, 92) तिरूवरगुण मंगै (नत्तम), 93) तिरुप्पुलिड्कुड़ी (आल्वार नव तिरुपति-3), 94) तिरुत्तोलै विल्लिमंगलम, 95) तिरुक्कुलन्द (पेरुंकुलम), 96) तिरुक्कोलूर, 97) तिरुपैरे, 98) आल्वार तिरुनगरी, 99) तिरुविल्लीपुत्तूर, 100) तिरुत्तणकाल (तिरुत्रणकालूर), 101)तिरुक्कुडल, 102) तिरुमालिरुनचोलाई, 103) तिरुमोहूर, 104) तिरुक्गोष्ठियूर, 105) तिरुप्पुल्लाणि, 106) तिरुमेय्यम, 107) तिरुप्पर कडल (क्षीर सागर), 108) तिरूपरमपदम (श्रीवैकुण्ठधाम)।

क्रमशः

नीति पद्यम्

आन्ध्र देश के कबीर श्री वेमना

(संत वेमना की कुछ चुनी हुई रचनायें)

मूर्ख-पद्धति

कर्म गुणमुलेल्ल कड बेट्टि नडवमि
दत्व मेट्लु तन्नु दगुलु कोनुनु?
नूने लेक दिव्वे नूवुल वेलुगुना?
विश्वदाभिरामा विनुरवेमा ॥६॥

जब तक कर्मों का नाश नहीं होता, तब तक मानव तत्वज्ञान को कैसा प्राप्त कर सकता है? संत वेमना इसको तिल और तेल के उदाहरण के माध्यम से समझा रहे हैं। अर्थात दीप को तेल से ही जलाया जाता है न कि तिल से। अतः तिलों की तरह काले कर्मों को पेर कर ही तत्व रूप तेल जिससे दृष्टि निर्मल हो जाती है। उसी से ब्रह्म का दर्शन प्राप्त होता है।

मार्च २०२२

०१ महाशिवरात्रि

१०-१८ तरिगोंडा श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव

१३-१७ तिरुमल श्री बालाजी का प्लवोत्सव

१७ होली

१८ श्री लक्ष्मीजयंती, श्री तुंबुरु तीर्थ मुक्कोटी

२९ श्री अन्नमय्या वर्धंति

३० से अप्रैल ०७ तक तिरुपति श्री कोदंडरामस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव

आयुर्वेद में बंगाल चना

- डॉ.सुमा जोषि, मोबाइल - 9449515046

हमें यह सलाह बचपन से मिलती आ रही है कि सुबह खाली पेट भीगे हुए चने खाने चाहिए। इससे सेहत बनती है। तो आज इसके बारे में विस्तार से जानेंगे। आयुर्वेद में इसे 'चणक' कहा जाता है। इसे 'शिम्बि धान्य वर्ग' में रखा गया है।

Latin name - Cicer arietinum

Family - Leguminosae

संस्कृत में इसे चणक, अंग्रेजी में Bengal gram अथवा Chickpea,

कन्नड में कडले, तेलुगु में शनगलु कहा जाता है।

आयुर्वेदिक गुणधर्म :

1) रस - कषाय रस, मुँह में कसैला स्वाद है।

2) वीर्य - यह शीतवीर्य का है।

3) यह रूस है। मतबल सूखा है।

4) यह पाचन के लिए हल्का है।

5) इसके ज्यादा प्रयोग से मलबद्धता होती है।

6) यह पित्त और कफ दोष में सन्तुलन बनाता है और वातदोष को बढ़ाता है।

भोजन कुतूहलम ग्रन्थ में यह स्वाद को बढ़ाता है, पाचन के लिए भारी है और कफ-वात को बढ़ाता है ऐसा दिया गया है। यह गुणधर्म इसके पत्तों के लिए दिया गया है। और कहा गया है की, यह स्वाद में अम्ल और मलबद्धता करता है ऐसा कहा गया है। यह पित्त को कम करता है और दान्त में होनेवाली शोथ को भी कम करता है।

उपयोग के अनुसार गुण :

1) चना पानी में उबला हुआ - यह स्वादिष्ट होता है और शारीरिक बल को बढ़ाता है।

2) पानी के भाप में पकाये हुए - यह कफ और पित्त में सन्तुलन बनाता है।

3) शुष्क भुना हुआ - यह बहुत ही शुष्क होता है। वात दोष और चर्म विकारों को बढ़ाता है।

4) भुने हुए चने - शरीर में लघुता लाता है। आमदोष को कम करता है। थकान को कम करता है।

5) अच्छी तरह से तला हुआ - ये स्वादिष्ट होते हैं। पाचन के लिए हल्के होते हैं। उष्णवीर्य के होते हैं। वातदोष को सन्तुलित करते हैं। कफ और शीत को कम करते हैं। रक्तदोष को बढ़ाते हैं।

6) आद्र चने - ये शीतवीर्य के होते हैं। पाचन के लिए हल्के होते हैं। बहुत ही मृदु और स्वाद को बढाते हैं। पित्तदोष को कम करते हैं। वीर्य को semen घठाता है।

7) शुष्क चने - ये स्वादिष्ट होते हैं। उल्टी को कम करता है। पाचन - वीर्य - शक्ति को बढ़ाता है।

स्वास्थ्य में उपचार :

1) पित्तदोष के कारण उत्पन्न हुई उल्टी, सीने में जलन, सरदर्द (Gastritis) में चने के पानी में गुडूची को मिलाकर देना चाहिए।

2) चने के पानी चान्दनी में रखकर सुबह खाली पेट पीने से, पित्तदोष के कारण उत्पन्न पेटदर्द को कम करता है।

3) उचित प्रकार से पकाने के बाद सेवन करने से शरीर को पोषण देता है और ताकत बढ़ाता है।

4) बंगाल चना पाऊडर का व्यापक रूप से बॉडी वॉश पाऊडर के रूप में उपयोग किया जाता है। शिशुओं में, यह अकेले स्नान पाऊडर के रूप में प्रयोग किया जाता है। वयस्कों में, इसे आमतौर पर अन्य त्वचा के लिए लाभकारी जडी-बूटियों के पाऊडर जैसे कि चंदन, मञ्जिष्ठ, खादिर आदि के साथ मिलाया जाता है और एक पाऊडर मिश्रण तैयार किया जाता है। चना पाऊडर और जडी बूटियों का अनुपात 50:50 होना चाहिए।

5) चना पचने में बहुत समय लेता है। इसीलिए वजन घटाने में इसका प्रयोग किया जाता है।

6) भीगे हुए चने का सेवन कैंसर के खतरे से भी बचाए रखेगा। चने में ब्यूटिरेट नामक कैटी एसिड पाया जाता है जो मुख्यरूप से कैंसर को जन्म देनेवाली कोशिकाओं को खत्म करने में मदद करता है।

7) भीगा हुआ चना रोज खाने से चने में मौजूद आयरन की प्राप्ती होती रहेगी। इसलिए रोज सुबह भीगे हुए चने का सेवन करना चाहिए।

8) इसमें फाइबर और प्रोटीन ज्यादा होता है। इसीलिए ब्लड शुगर के स्तर को कम करने में सहायता करता है।

9) चनों को भुनकर, पोटली बनाकर सूंघने से सिरदर्द कम होता है।

10) रात को सोते समय थोडा भुना चना और गुड खाने से खाँसी में लाभ होता है।

11) रात में सोते समय थोडा भूना चना गर्म दूध के साथ पीने से श्वासनाली के सम्बन्धी रोगों से छुटकारा मिलता है।

12) चने की भूसी को हुक्के में रखकर उसकी धूम का सेवन करने से हिचकी बन्द होती है।

13) चने को छह गुने जल में भिगोकर दूसरे दिन सुबह उसका पानी छानकर 10-20 एम.एल. मात्रा में पीने से पैत्तिक-छर्रि (उल्टी) से राहत मिलती है।

14) चने को आग में भूनकर खाने से क्रूरकोष्ठ (जिनको कठिनता से मल निकलता है) से छुटकारा मिलता है जिससे पेट दर्द कम होता है।

15) चने के पौधे से निकलनेवाले अम्लीय निर्यास या निचोड के सेवन करने से भूख न लगना, पेट में दर्द होना कम होता है।

16) शहद और चने में फाइबर्स की मात्रा अधिक होती है जिसका सेवन करने से कब्ज दूर रहती है और डाइजेशन ठीक होता है।

17) 'चणकामला' करके एक आयुर्वेदिक औषधी है जो मुहँ में अम्लरस होता है। इसे अजीर्ण, पेटदर्द, मलबद्धता इत्यादि में उपयोग लिया जाता है।

18) रातभर भिगोए हुए काले चने में थोडी-सी शहद की मात्रा मिलाकर खाँए। रोजाना इसके सेवन से स्टोन के होने की सम्भावना काफी कम हो जाती है और अगर स्टोन है, तो आसानी से निकल जाता है।

19) काले चने में घुलनशील फाइबर होता है जो बाइल एसिड को बान्धने में मदद करता है और शरीर के कोलेस्ट्रॉल लेवल को कम कर सकता है।

इस तरह से अनेक प्रकार से चने का उपयोग किया जा सकता है। किसी का भी प्रयोग अतिमात्रा में नहीं होना चाहिए। यह लेखन जानकारी के लिए दिया गया है। कोई भी सन्देह हो, तो आयुर्वेद के डाक्टर की सलाह पर प्रयोग करना उचित है।

❖❖❖

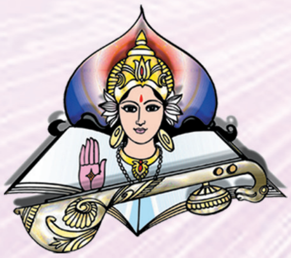

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

लेखक - महामहोपाध्याय काशिकृष्णाचार्य
आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या
हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी
मोबाइल - 9949872149

चतुर्दशः पाठः - चतुर्दश पाठ

शाकम् = करी	प्रथमम्= प्रथम	अनन्तरम्= बाद में
तटाकः = तालाब	तटाके = तालाब में	अनेकधा = कई विधानों में

प्रश्न : (अ)

1. तटाकः अत्रास्ति किम्?
2. तटाके प्रथमं स्नानं कुरु।
3. पाकं अहं करवाणि।
4. अग्रजः शाकानि करोतु!
5. यूयं स्नानं अकुरुत खलु!
6. वयं भोजनमपि अकुर्म।
7. ते इदानीं तटाके स्नानं कुर्वन्ति।
8. बत! ते तटाके न सन्ति।
9. बालकास्तटाके दौष्ट्यं कुर्वन्ति।
10. तथावा, अत्र किञ्चित् एहि।

जवाब : (अ)

1. क्या यहाँ कोई तालाब है?
2. सबसे पहले तालाब में स्नान करें।
3. मैं खाना बनाता हूँ।
4. अग्रज कडी बनाता है!
5. क्या आपने स्नान किया है!
6. हमने भोजन भी किया।
7. वे अब तालाब में नहा रहे हैं।
8. अहो! वे तालाब में नहीं हैं।
9. बच्चे तालाब में शरारत कर रहे हैं।
10. ठीक है, थोडा इधर आइए।

प्रश्न : (आ)

1. तुम शरारत मत करो।
2. क्या मैं शरारत कर रहा हूँ?
3. वहाँ बच्चे शोर मचा रहे हैं।
4. वे तालाब में नहा रहे हैं।
5. सबसे पहले मैंने कडी बनाई।
6. फिर उन्होंने भोजन बनाया।
7. कडी को किसने बनाया?
8. कुछ ब्राह्मण।
9. वे अनेक प्रकारों में किए।
10. आपको कल भी ऐसा ही करना चाहिए।

जवाब : (आ)

1. त्वं दौष्ट्यं मा कुरु।
2. किमहं दौष्ट्यं कुर्वन्नस्मि?
3. तत्र बालकाः दौष्ट्यं कुर्वन्ति।
4. एते तटाके स्नानं कुर्वन्ति।
5. प्रथममहं शाकमकरवम्।
6. अनन्तरं ते पाकमकुर्वन्।
7. शाकं कः अकरोत्?(के अकुर्वन्?)
8. केचन ब्राह्मणाः।
9. ते अनेकधा अकुर्वन्।
10. श्वः त्वमपि तथैव कुर्याः।

चित्रकथा

श्री कल्याणवेंकटेश्वर स्वामीजी

तेलुगु में - श्री डी.श्रीनिवास दीक्षितुलु
हिन्दी में - डॉ.एम.रजनी
चित्र - श्री के.तुलसीप्रसाद

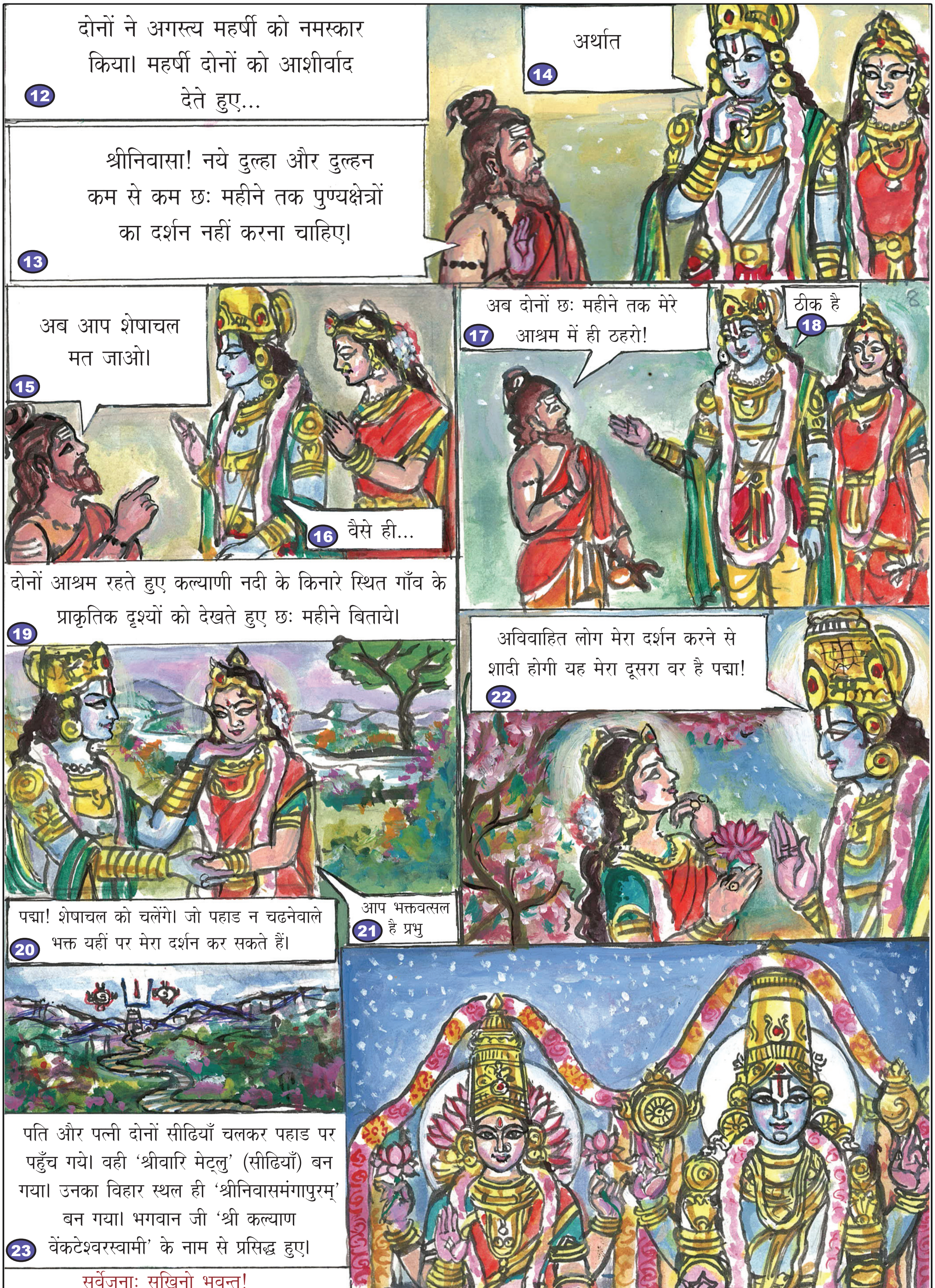

सर्वेजनाः सुखिनो भवन्तु!

स्थाई सत्य

- श्रीमती के प्रेमा रामनाथन
मोबाइल - 9443322202

राजा चन्द्रसेन एक बार अपने कुछ वीरों के साथ शिकार खेलने जंगल के अन्दर गया था। वह घना जंगल था। अचानक राजा अपने वीरों से बिछुडकर दूसरा मार्ग अपना लिया था। इसलिए वह उन वीरों से अलग हो गया था। उस समय उसे अधिक भूख लगी थी और वह थका मांदा भी था। उसने आस-पास देखा तो एक झोंपडी थोडी दूर पर थी। राजा उसके अन्दर गया और देखा कि वहाँ साधु हरिदास थे। साधु ने अपनी झोंपडी में आए एक अपरिचित को शिष्टाचार के अनुसार स्वागत किया और उसे अपने सामने बिठा लिया। उसके बाद उन्होंने उससे पूछा, ''तुम कौन हो?''

राजा ने कहा, ''मैं इस देश का राजा हूँ और मेरा नाम चन्द्रसेन है।'' यह सुनकर साधु ने कहा, ''मैंने सिर्फ यही पूछा कि तुम कौन हो, न कि तुम्हारे पद के बारे में। यदि कोई बलवान शत्रु तुम्हारे देश को कब्जा कर ले तो तुम्हारा पद उसी क्षण छूट जाएगा। इसलिए मैंने यही पूछा कि तुम कौन हो?'' उसके बाद राजा ने साधु से कहा, ''महान, अब मैं बहुत भूखा हूँ। पर आप इस समय मुझे समझा रहे हैं।'' इतना कहने के बाद राजा के मन में साधु का सवाल गूंजता रहा। उस समय एक शिष्य फल भर टोकरी लेकर अन्दर से आया। उसने साधु को नमस्कार करके उस टोकरी को उनके निकट रखकर चला गया। उसने साधु के सामने बैठे देश के राजा को देखकर भी अनदेखा करके चला गया। उसके ऐसे व्यवहार से राजा के मन में उसके प्रति घृणा पैदा हुई। इन सबको साधु देख रहे थे।

राजा ने थोडे समय तक देखा कि साधु खाने के लिए फल देंगे। समय बीतता रहा और आखिर राजा ने सोचा कि साधु खाने के लिए फल न देने वाले हैं। इसलिए वह उधर से निकलने के लिए उठ खडा हुआ। यह देखकर साधु ने उसे बैठने को कहा। उसके बाद उन्होंने राजा को देखकर कहा, ''वत्स, मेरे शिष्य को तुम्हारे बारे में कोई पता नहीं है। इसलिए वह तुमको देखकर भी नमस्कार किए बिना चला गया है। राजा का पद सदा स्थाई नहीं है। यदि कोई बलवान शत्रु इस देश का राजा बन जाए तो अब तुमको जो आदर मिलता है वह उस समय नहीं मिलेगा। इसलिए पहले यह जान लो कि तुम कौन हो?'' इतना कहकर उन्होंने राजा को खाने के लिए फल दिए।

उस समय एक वीर बडी तेजी से वहाँ आ पहुँचा। उसने राजा से मिलकर कहा, ''महाराज, हमारे किले के चारों ओर शत्रुओं ने घेर लिया है। अब हमारी राजधानी में कठोर युद्ध चल रहा है। आप जल्दी निकलिए।'' यह सुनकर राजा अपनी भूख को भी भूलकर घोडे पर बैठने दौड पडा। यह देखकर साधु ने उसे रोका। पर राजा ने कहा, ''अब मैं बेचैन हूँ, मुझे जाने दीजिए।'' तब साधु ने उसे समझाया, ''पहले ये फल खा लो और अपनी थकान दूर करने थोडी देर आराम कर लो।''

साधु की बात मानकर राजा ने ऐसे ही किया। पेट भर खाने के बाद वह पेड की छाया में सो गया। यकायक वह जाग उठा। उसने साधु को देखकर कहा, ''महान! मैं अपने को भूलकर सो गया।'' उसकी बात सुनकर साधु को हँसी आ गयी उन्होंने कहा, ''मैं भूखा हूँ; मैं बेचैने हूँ; मैं सो गया हूँ - इस प्रकार तुमने अनेक बार जवाब दिया है। असल में क्या तुमने अपने को जान लिया है?''

थोडी देर चुप रहकर साधु ने उसे देखकर कहा, ''असल में मैं का मतलब यह शरीर या मन नहीं है। मैं का मतलब आत्मा मात्र है। देश, युद्ध, जीत, हार ये सब अस्थाई हैं। हमारे शरीर में प्राण होने तक इनसे सुख मिलेगा। आध्यात्मिक जीवन से आत्म सुख की प्राप्ति होगी और वही सच्चा सत्य है।

इसलिए तुम आध्यात्मिक जीवन में जीत पाने को अपना लक्ष्य बना लो।'' साधु के ऐसे उपदेश से राजा की आँखें खुल गयीं। उसने समझा कि हमारे रोज के जीवन में आने-जाने वाली चीजें स्थाई सुख देने वाली नहीं हैं। साधु का उपदेश सत्य है। अब राजा के मन में जीवन सत्य के प्रति सच्चा ज्ञान पैदा हो गया।

'क्विज'

- एन.प्रत्यूषा

१) श्री बालाजी का नैवेद्य कहा तयार की जाती है?

अ) पोटु (पाकशाला) आ) होटल इ) घर ई) कोई नहीं

२) दसावतारों में सातवाँ अवतार कौन सा है?

अ) श्रीकृष्ण आ) बलराम इ) श्रीरामावतार ई) वामनवतार

३) सीता के पास किस राक्षस ने माया हिरण के रूप में आया था?

अ) मारीच आ) सुभाहुव इ) खर ई) इन्द्रजीत

४) वामन को किसने जन्म दिया था?

अ) अदिति आ) दिति इ) उत्तरा ई) धरणी

५) बलरामकृष्ण के गुरु का नाम क्या है?

अ) गौतम आ) विश्वामित्र इ) सांदीप ई) द्रोणाचार्य

६) ब्रह्म के हाथ से वेदों का अपहरण किसने किया था?

अ) सोमकासुर आ) मधु-कैटभ इ) हिरण्याक्ष ई) रावण

७) कनुमा त्योहार के दिन किस जानवर की पूजा की जाती है?

अ) कुत्ता आ) हाथी इ) बिल्ली ई) गाय

जवाब

१) अ २) इ ३) अ ४) अ ५) इ ६) आ ७) ई

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

तिरुमल यात्री इनको आचरण न करें, तो अच्छा होगा।

- अपने साथ कीमती आभूषण या अधिक नकद न रखें।
- भगवान के दर्शन के लिए मात्र ही तिरुमल पधारें, अन्य किसी उद्देश्य से नहीं।
- दर्शन के लिए जल्दबाजी न करें, क्यू लाइन में ही सक्रम जाने का प्रयत्न करें।
- मंदिर के आचार-व्यवहारों के अनुरूप मंदिर में प्रवेश निषिद्ध है, तो कृपया मंदिर को न आवें।
- तिरुमल में सभी फूल भगवान की पूजा के लिए है इसलिए पुष्पों का धारण न करें।
- पानी और बिजली को वृथा न करें।
- अपरिचितों को काटेज में प्रवेश न दें। चाबियों को उन्हें न सौंपें।
- पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रिक थैलियों के अलावा किसी अन्य प्लास्टिक थैलियों का उपयोग न करें।
- चार माडावीथियों में चप्पल धारण न करें।
- भगवान दर्शन और आवास के लिए धोखेबाज या दलाल से संपर्क न करें।
- फेरीवालों से नकली प्रसाद मत खरीदें।
- तिरुमल मंदिर के परिसरों में थूकना आदि असह्य कार्य न करें।
- सेलफोन, कैमेरा जैसी चीजें और आयुधों को मंदिर के अंदर न ले जायें।
- विविध राजकीय कार्यकलाप, सभायें, ब्यानर, रास्तारोक, हडताल आदि सप्तगिरियों पर निषेधित है।

इस चित्र को रंगों से अब भरें क्या?

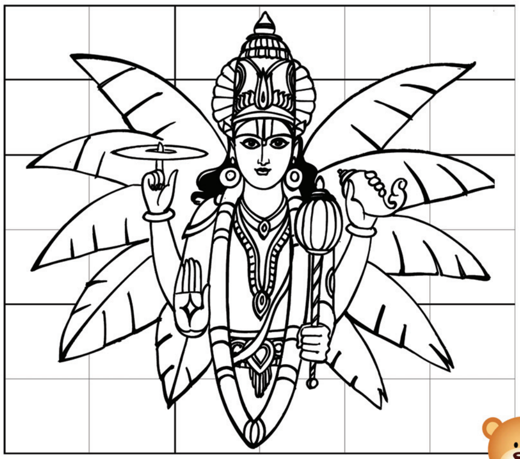

बगल में सूचित चित्र को नीचे के डिब्बों में खींचिये-

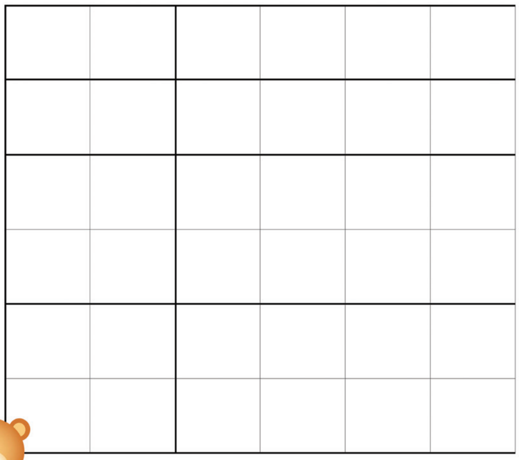

निम्न लिखित को मिलाएँ!

1) राजा	अ) ब्रह्म
2) पुष्प	आ) गंगा
3) ऋषि	इ) दशरथ
4) त्रिमूर्ति	ई) कमल
5) नदि	उ) अगस्त्य

1) इ 2) ई 3) उ 4) अ 5) आ

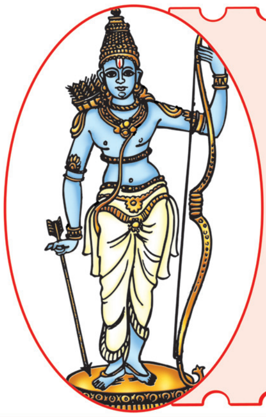

श्रीराम मंत्र

श्रीराम राम रामेति
रमे रामे मनोरमे।
सहस्रनाम तत्तुल्यं
राम नाम वरानने॥

चित्र में अंतर खोजे!

1) कौआ
2) कान की बाली
3) कमर का बंधन
4) पुष्प
5) अंगूठा बींदर
6) दुपट्टे की धार
7) आदमी के माथे पर बूंद

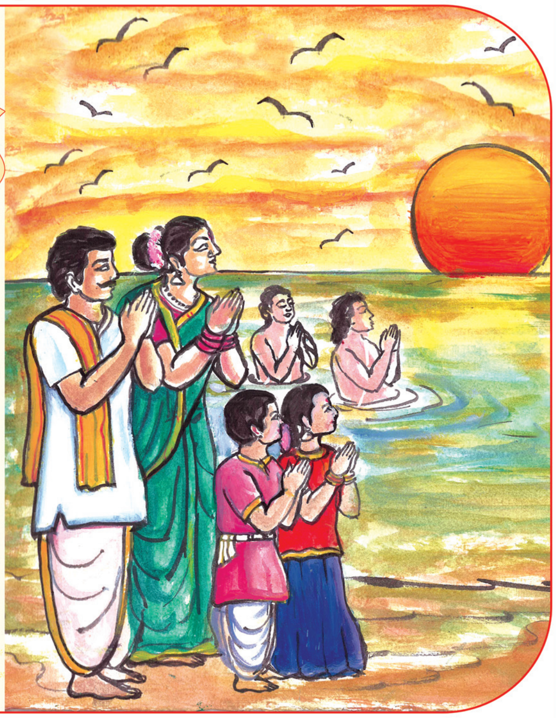

Printed by Sri P. Ramaraju, M.A., and Published by Dr.K. Radha Ramana, M.A., M.Phil., Ph.D., on behalf of Tirumala Tirupati Devasthanams and Printed and Published at Tirumala Tirupati Devasthanams Press, K.T.Road, Tirupati-517 507. Editor : Dr.V.G. Chokkalingam, M.A., Ph.D.

तिरुपति
श्री कपिलेश्वरस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव

2022 फरवरी 21 से मार्च 03 तक

21-02-2022 सोमवार
रात - मूषिक वाहन पर विनायकस्वामीजी, अंकुरार्पण

22-02-2022 मंगलवार
दिन - पालकी उत्सव, ध्वजारोहण
रात - हंसवाहन

23-02-2022 बुधवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

24-02-2022 गुरुवार
दिन - भूतवाहन
रात - सिंहवाहन

25-02-2022 शुक्रवार
दिन - मकरवाहन
रात - शेषवाहन

26-02-2022 शनिवार
दिन - तिरुच्चि उत्सव
रात - अधिकारनंदिवाहन

27-02-2022 रविवार
दिन - व्याघ्रवाहन
रात - गजवाहन

28-02-2022 सोमवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - तिरुच्चि उत्सव

01-03-2022 मंगलवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - नंदिवाहन (महाशिवरात्रि)

02-03-2022 बुधवार
दिन - पुरुषामृगवाहन
रात - कल्याणोत्सव, अश्ववाहन

03-03-2022 गुरुवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन पर नटराजस्वामी, त्रिशूलस्नान
रात - ध्वजावरोहण, रावणासुरवाहन

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthnams
Printing on 25-01-2022 & Posting at Tirupati RMS Regd. with the Registrar of Newspapers for India under RNI No.10742/1957. Postal Regd.No.TRP/152/2021-2023
"LICENCED TO POST WITHOUT PREPAYMENT No.PMGK/RNP/WPP-04(2)/2021-2023"
Posting on 5th of every month.

श्रीनिवासमंगापुरम्
श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव
दि. 20-02-2022 से दि. 28-02-2022 तक